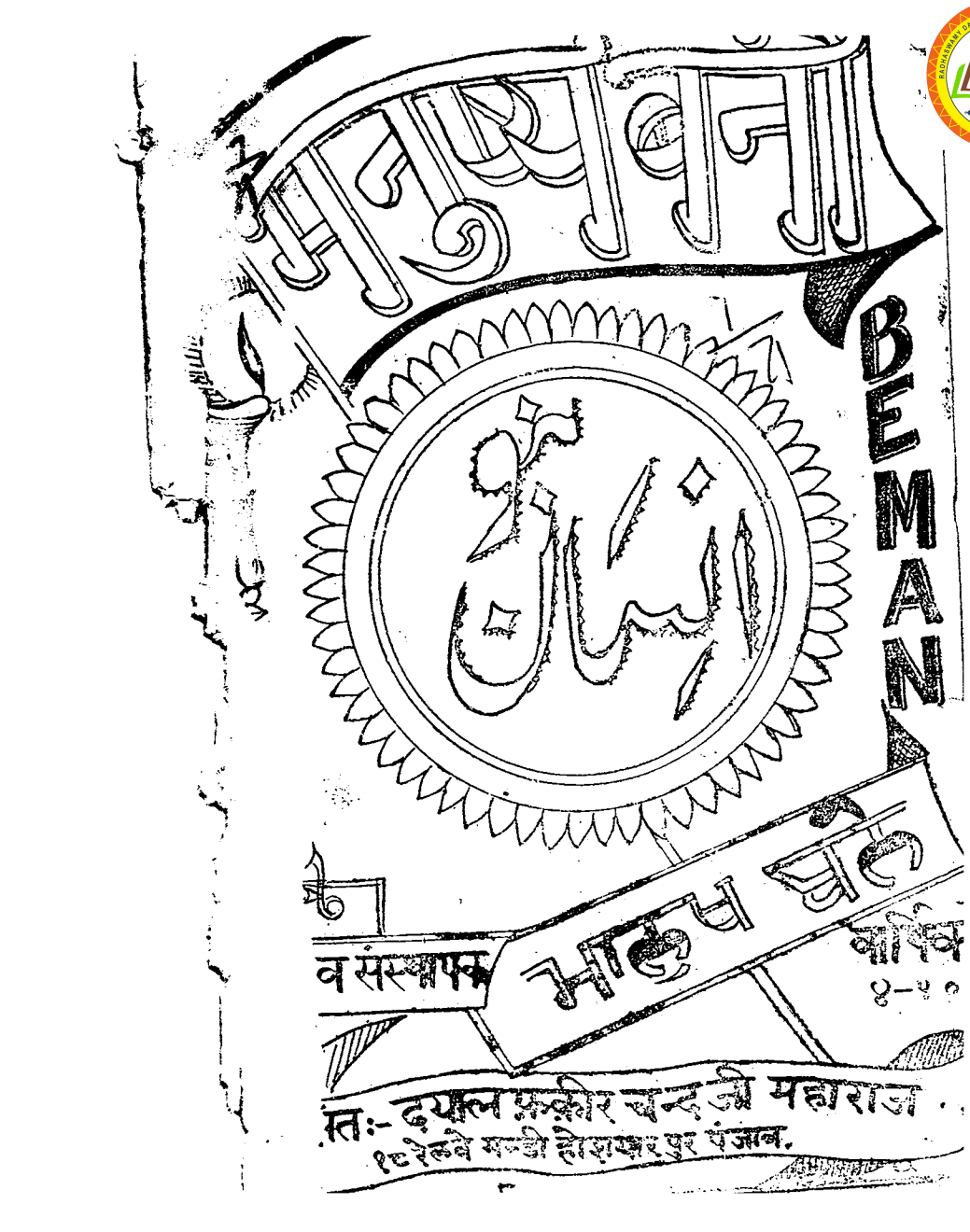

मनुष्य बना

انساں

BEMAN

व संस्थापक

४-५

तः- दयाल फकीर चन्द जी महाराज

१८ रेलवे मण्डी होशियारपुर पंजाब

परम पुरुष पूरन धनी परम दयाल फकीर साहब जी महाराज
मानवता मन्दिर होशियारपुर

RS.

—:मनुष्य बनो:—

ओ३म् पूर्णमिदं : पूर्णात्पूर्णं मदुच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेबावशिष्यते ॥

वर्ष १६	जुलाई सन् ७१ श्रावण सं० २०२८ वि०	सं० १०/२२५

गुरु चरन से लग कर तर गया टेक ॥
गन्दे जल में पड़ी निर्मली, शुद्ध होगया पानी
तैसे ही गुरु के सतसंग से, निर्मल हो गये प्रानी ॥
वह अपने कर्म को कर गया, गुरु चरन———टेक ॥
नीम बबूल पितास सुबासत, चन्दन का संग पाई ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, सतसंगी की भलाई ॥
काल कर्म भय टर गया, गुरु चरन ———टेक ॥
काठ को नौका लोहा लादे, वार पार लेजाई ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, अधमाधम तर जाई ॥
परदेश को तज कर घर गया, गुरु चरन——टेक॥
अमृत रस जब मुख म टपका, जावन का रस पाया ।
तैसे हीगुरु के सतसंग से, भूल न ब्यापै माया ॥
भव फाँस कटा करतर गया, गुरु चरन——टेक ॥
नदी नाले का जल गंगा से, मिलकर गंग कहावे ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, नरसत जोवन पावे ॥
जिसे गुरु न मिला वह मरगया, गुरु चरन——॥ टेक ॥
मैला वस्त्र मिल सावुन से, उज्जवल निर्मल होता ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, जीव मुक्ति सुख सोता ॥

गुरु संस्कार से भर गया, गुरु चरन से—॥ टेक ॥
सुरत शब्द का मेल मिले जब, सुरत हो शब्द के रूपा।
तैसे ही गुरु के सतसंग से। पड़े न कोई भव कूपा ॥
राधा स्वामी नाम सुमिर गया, गुरु चरन ——॥टेक॥

हमारी बात ॥ प्रेम की दात ॥

दुख दर्द और मुसीबत दिनरात झेलते हैं।
है इनमें हमको राहत हम इनसे खेलते हैं॥
सेहत की पूजते हैं हम दर्द प्यारे भाई।
किस्मत के अपने पापड़ खुश होके बेलते हैं॥
सुख के माथे सिल पड़े, जो नाम हृदय से जाय।
बलिहारी या दुःख की, जो पल पल नाम रटाय॥

इस दोहे ने हमारी पूंटी करदी हमारा ही ऐसा बिचार नहीं है। बड़े बड़े संतों और परम सन्तों के सांथ हमारी बाणी मेल खाती है इसलिये तो :—

तुम्हारा नाम लेकर, खैरों बरकत चाहते हैं हम।
अगरचै जानते हैं वे नामो निशाँ तुम हो॥
गुरु समरथ सिर पर खड़े, काह कमी तोहि दास।
रिद्धि सिद्धि सेवा करें, मुक्ति न छांड़े पास॥

यह कबीर और परमदयाल फकीर साहब जी महाराज के आज-कल धुरपद और धुरधाम के लेख ही हमारी शंका समाधान कर कष्ट निवारन करते रहते हैं। समय के सतगुरु और सतज्ञान दाता की किन शब्दों में प्रशंसा करें :—

सात समुद्र की मसिकरूँ, लेखनि सब बनराय।
सब धरती कागद करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय॥

कौन है ऐसा जो गुरु की महिमा का बर्णन कर सके ? दाता दयाल जी

का कथन है कि :—

गुरू की महिमा कौन गाये, उसका गाना है कठिन ।
पहुँचने वाले कहां तुझ तक, हैं वानी और बचन ।।
बुद्धि निर्णय कर नहीं सकती, न चित चिंतन के योग ।
सोचने और समझने की, शक्ति पाता है न मन ।।
योगी अपनी मुक्ति भूले, ध्यानी भूले ध्यन कर ।
जोगी थक कर हार बैठे, करचुके जब सब जतन ।।
तू न काशी और मथुरा द्वारका में तू कहां ।
ढूँढ़ने बन खंडी और तपसी, चले हैं सूना बन ।।
मेरे हृदय में बसा रहता है, निः सन्देह तू ।
राधा स्वामी भेद बतलाया, लगी तुझसे लगन ।।

गुरु भेद देने वाले, सत ज्ञान दाता होते हैं इसी लिये उनकी महिमा अपरमपार है। कोई पार नहीं पा सकता :—

गुरु महिमा अगम अपार, पार कोई कैसे पावे ।
रहे मौज चित धार, समझ में कुछ कुछ आवे ।।
राधा स्वामी मौज की, अब तक न आई थी समझ ।
सतसंग में सतगुरु के पहुँचा तब मिली मुझको समझ ।।
धन्य सतगुरु राधा स्वामी, धन्य महिमा आपकी ।
ज्ञान का परिचय दिया, अरू दुविधा मेंटी ताप की ।।
अब नहीं भय डर किसी का, काम में है मन लगा ।
भाग्य अपना क्या सराहें, सो रहा था यह जगा ।।
गुरु रूप अनूप बसा मनमें, मेरे मन भीतर अमृत सागर ।
गुरु करुना सिंधु दयाल गुरू, मोहि काढ़ लिया गम के घर से ।।
गुरु सुन्दर रूप बसा मनमें, अब और सेध्यान लगाबत को ।
जब अन्तर बाजे बाज रहे, फिर बाहर साज बजावत को ।।
घट में जब शब्द की धुन प्रगटी, फिर और रागिनी गावत को ।

अपनी सतगुरु से लगन लगी, फिर दूजा देव मनाबत को ।।
दिल में दिलबर मिलिगया, काबा को जायें क्या जरूर ।
पाक हम दुई से हैं, गंगा न्हायें क्या जरूर ।।
हो रही है बन्दगी, दम दम के पीछे दोस्तो ।
तसबीह और माला पकड़ कर, हम फिरायें क्या जरूर ।।
एक ही नुक्ते में पता , मिल गया इल्मों का सब ।
बोझ पुस्तक का अपने सर, उठायें क्या जरूर ।।
पढ़ पढ़ कर बहु उम्र खपाई, सार हाथ नहीं आया ।
तुम्हरे एक ही शब्द ने सतगुरु, सहज ही काज बनाया ।।
बिन सतगुरु विबेक नहीं आवे, गुरु बिन जगत अंधेरा ।
राधा स्वामी पद का लिया आसरा, मिट गया 'मेरा तेरा' ।।
'मैं पना' जाता रहा जब, 'तृपना' भी दूर है ।
मिट गया "मैं तू" का झगड़ा, कशमकश काफूर है ।।
अब आई इसकी समझ, यह है गुरु की दैन ।
बीस बरस सेवा करी, तब उपजा सुख चैन ।।
करत करत इस काम के, रगड़ लगीं बे अन्त ।
इनसे घबराते नहीं, भली करें भगवंत ।।
जो तू गुरु का बोलका, कुछ तो सोच बिचार ।
तारें तेरे कर्म ही तो, गुरु को काह उपकार ।।
ताते शरनागति रहो, सुन लेना सब कोय ।
परम स्नेही सतगुरु, दया करेंगे सोय ।।

परमदयाल जी के बचनामृत मानवता मन्दिर में ६-५-७१ को

मन को मारूँ पटक कर, टूक टूक हो जाय।
बिष की क्यारी बोय कर, लुन्त क्यों पछिताय ।।
यह मन पटक पिछोरिये, सब आपा मिटजाय।
पिंगला होथ पीऊ पीऊ करे, ताको काल न खाय ।।

राधा स्वामी। आज सतसंग में यह शब्द पढ़ा गया। मुझे जब से चेतता आई, किसी खोज में रहा मौज हुजूर दाता दयाल जी के चरणों में ले आई उनके शुद्ध स्वरूप ने मुझ पर अत्यन्त दया की। हम इस संसार मे दुःख सुख उठाते हैं क्यों कि मैंने अपने जीवन के अनुभव से सिद्ध किया है कि जैसा ख्याल, हाल वैसा जैसी करनी वैसी भरनी, जैसी मति वैसी गति, जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि हम अपने अन्तर में जो भी भाव बिचार उठाते हैं उसका प्रभाव शरीर और मस्तिष्क पर पड़ता है और दूसरों पर भी पड़ता है, यह तो रही जाग्रत की बात, इसकी रेडियेशन कहते हैं। हमारे स्वपन के बिचारों का भी हम पर प्रभाव पड़ता है। कैसे ? उदाहरण अश्लील है। रात को कोई स्त्री तुम्हारे पास आजाती है। वास्तब में वह स्त्री तो है नहीं, वह तो केवल स्वप्न है और वह स्त्री तुम्हारे अपने ही बिचार से बनी हुई है——तुम्हारा बीर्य पात हो जाता है।यद्यपि यह उदाहरण निक्रिष्ट है किन्तु समझने और समझाने के लिये ठीक है।

स्वप्न में तुम क्रोध में आकर किसी को मुक्का मारते हो तुम्हारा हाथ हिल जाता है। अनेक बार तुम स्वप्न में डर कर चिल्लाते हो तो तुम्हारे निकट मैं सोने वाले भी जाग उठते हैं। तो यह प्रमाण हैं कि जब स्वपन अवस्था के तुम्हारे मन में बिचार तुम पर और दूसरों पर प्रभावित होते हैं तो जाग्रत अवस्था में तुम जो बिचार करते हो, किसी से प्रेम करते हो, किसी से द्वेष, ईर्षा घृणा के भाव रखते हो तो उनका प्रभाव तुम्हारे शरीर और मस्तिष्क पर और दूसरों के शरीर और मस्तिष्क पर क्यों नहीं पड़ेगा।

सोचो मेरी बात को संसार ने संत मत को समझा नहीं है। यह तो केवल गुरु गुरु करना जानते हैं और धन्य बाबा सावन सिंह, धन्य बाबा फकीर, धन्य राम और धन्य कृष्ण ही करना जानते हैं। किन्तु ऐसा धन्य करना भी किसी सीमा तक अच्छा है कम से कम तुम्हारे मन में श्रद्धा और प्रेम तो है। यह न समझना कि जो राम या कृष्ण या गुरु या बिष्णु की स्तुती करते हैं मैं उनके विरुद्ध हूं। मैं तो यह कहता हूं कि जैसा कोई व्यक्ति संकल्प करेगा उसका वैसा ही प्रभाव उसके शरीर और मन पर होगा। और यही कबीर साहब कहते हैं :—

मन को मारूँ पटक कर, टूक टूक हो जाय।
बिष की क्यारी बोय कर, लुन्ता क्यों पछिताय।

यह तो संतों का मार्ग है, कबीर साहब कहते हैं कि इस मन को ऐसा पटक कर मारूँ कि यह टुकड़े टुकड़े हो जाय। क्यों? क्यों कि इस संसार में काल और माया के अन्तर मन ही सारा काम करता है, मन ही इसका राजा है। इसके लिये कबीर साहब कहते हैं कि भई इस झगड़े को छोड़ने के लिये मन को ऐसा पटक कर मारूँ कि वह टुकड़े टुकड़े होजाय न यह रहे न इसके बिचार रहें और न उसका प्रभाव जो शरीर मस्तिष्क और बाह्य जगत पर पढ़ता है वह रहे।

मैं अल्प आयु से ही इस मन के चक्र में रहा हूं। इस मन को टूक टूक करने की मुझ में शक्ति नहीं थी। मेरे मन को टूक टूक करने का आधार हुजूर दाता दयाल जी थे, जिनका स्टेचू सामने है। उनकी आज्ञा पालन करने के कारण इस मन को टुकड़े टुकड़े करने और पटक देने की युक्ति तथा बिधि मुझे मिली। ऐ श्री कृषक, कमालपुर वाली माई !! और अन्य सतसंगियो !!! जब से मैंने आप लोगों से और अमरीका, अफरीका, कनाडा और अन्य देशों के लोगों से यह सुना कि मेरा रूप उनके अन्तर प्रगट होता है और मैं नहीं होता मेरा रूप उनके नाना प्रकार के कार्य कर जाता है और मैं नितान्त अनभिज्ञ होता हूं तो मुझे

विश्वास और निश्चय हो गया कि प्रत्येक व्यक्ति जो राम को बनाता है कृष्ण को बनाता है, गुरु को या किसी प्रकार के रूप बनाता है, या बिचार करता है यह सब उसके अपने मनका खेल है।

तो जब से मुझे बिश्वास हो गया और यह ज्ञान हो गया तबसे मुझे इस मन को पटकने की युक्ति मिल गई। अब मैं मनको तो जाग्रत अवस्था में पटक सकता हूं किन्तु मुझे खेद है कि में अभीतक स्वप्न अवस्था में इसे नहीं पटक सकता। संम्भवतः कोई और संत संसार में पटक सकता हो। इसका मुझे पता नही मैंने हुजूर बाबा सावन सिंह जी को को तीन पत्र रजिस्ट्री करके भेजे थे। क्या आपको स्वपन आते हैं ? यदि आते हैं तो किस प्रकार के ? किन्तु कोई उत्तर नहीं आया था जाग्रत में मैं मन को पटक सकता हूं किन्तु वह भी कोई दाबा नहीं। सम्भवतः कल को मस्तिष्क का सन्तुलन बिगड़ जाय तो क्या दशा हो ?

अभी मैं समाधि में। कहां था ? प्रकाश और शब्द में तो मन को पटका हुआ था अर्थात मन को छोड़ा था। अनेक बार जब समाधि से नीचे आया करता था तो मुझे यह बिचार सताया करता था कि फकीर बन्द दाता दयाल जी के साथ तेरा अत्यन्त प्रेम था, अब तू गुरु स्वरूप को छोड़ कर प्रकाश और शब्द में चला जाता है क्या तू गुरु भक्ती और प्रेम भक्ति से बिमुख होगया है या पथ भ्रष्ठ तो नहीं हो गया।

जब हुजूर महाराज राय बहादुर सालिगराम साहब जी महाराज जो कि राधा स्वामी मत के संचालक और संस्थापक हुये हैं उन्होंने अपनी पुस्तक प्रेम बाणी में अंकित किया है कि सतगुरु कौन ? सतगुरु शब्द स्वरूपी राधा स्वामी दयाल है और उनके चरण हैं, प्रकाश। इन बचनों कोपढ़ कर मेरा यह भ्रम दूरहूआ। अब में समाधि मैं तथा प्रकाश और शब्द में था तो मैं यह समझता हूं कि मैं सच्चे सतगुरु के दरबार में था। अब में ८४ वर्ष की आयु मैंयह समझता हूं कि वह जो मैं रूप का रूप का ध्यान करता था वह मेरे अपने मन का खेल था वह वास्तविक

और सच्चा सतगुरु नहीं था। अब चूँकि मुझे यह विश्वास होगया है इसलिये अब मैं यह प्रयत्न करता रहता हूं कि अपने आप को उस सच्चे सतगुरु के चरणों में लेजाऊँ और उससे मिलता रहूँ। उससे क्या होगा ? मन के बिचार चाहे अच्छे हों चाहे बुरे हों उनसे मैं प्रभावित नहीं हूंगा।

मैं तो बोल रहा हूं चौथे पद से या अगम धाम से ! संसार वालों से कहना चाहता हूं कि तुम लोग वहां नहीं पहुँच सकते क्यों ? तुम लोगों में अभी तक अपने शरीर की और मन की कामनाओं को पूरा करने की लालसा शेष है। इस लिये जब तक किसी को अपने शरीर और मन को ठीक रखने, इनको सुखदाई बनाकर इनमें आनन्द लेने की इच्छा है तबतक उसको क्या करना चाहिये ? उसको प्रेम, भक्ति, निष्काम, कर्म, गुरुस्वरूप से प्यार और बाहर के गुरु से प्रेम करना चाहिये ताकि मन के भीतर शुभ बिचार भर जांय और उन शुभ बिचारों के कारण तुम्हारा शारीरिक और मानसिक जीवन सुखदाई बन जाये। किन्तु यदि तुम यह चाहो कि ऐसा करने से तुम सदैव के लिये इस मन के चक्र से निकल जाओ तो यह असम्भव है संतमत और सनातन धर्म में प्रकाश और शब्द के साधन के अतिरिक्त और कोई बिधि इस मन के चक्र से निकलने की नहीं है और यही गरुड़ पुराण कहता है कि जब तक कोई व्यक्ति शब्द ब्रह्म और पार ब्रह्म से आगे नही जायगा उसका आवा गमन समाप्त नहीं होगा इसलिये कबीर साहब ने सच कहा है :—

मन को मारू पटक कर, टूक टूक हो जाय।
बिष की क्यारी बोय कर, लुन्ता क्यों पछिताय ॥

आवा गमन से तुम तब बच सकते हो। जब पहले अपने अशुभ बिचारोंको छोड़कर शुभ बिचारों को ग्रहण करो और फिर शुभ बिचारों को भी छोड़ दो तब तुम आगे जाओगे। यह वेदान्त कहता है कि यदि तुम्हरे पांव में एक कांटा गड़ जाय तो तुम एक दूसरा कांटा लेकर उस गढ़े हुये कांटे को उससे निकालो और दूसरे कांटे को भी फेंक दो बरन

वह भी किसी समय चुन सकता है।

मैं ऊँचा बोल रहा हूं यह मेरे बश की बात नही है इसलिये मैंने यहां के लिये कृषक जी को बुलाया है कि तुम लोगों की मन की गढ़त के लिये, जो प्रथम सोपान की युक्ति और बिधि है वह बताई जाय और तुम अपने मन से पहले अशुभ बिचारों को निकालो। फिर अपने मन के अन्तर गुरु स्वरूप का प्रेम पर उपकार और निष्काम कर्म के बिचार भरदें। पक्षपात द्वेष और परायापन न रखें। बिषय बिकारों किन्तु स्वप्न में आपा समाप्त नहीं होता। कई वार तो मैं सारी सारी रात सोता ही नहीं कियह स्वप्न मुझे न आयें, पता नहीं यह अवस्था मुझे कहां ले जायगी। यह मालिक जानता है।

मैं अपने घर जाने का इच्छुक था, मुझे बचपन से ही यह जानने की लालसा थी कि मेरा मालिक कहां है। अब पता लग गया कि प्रकाश और शब्द ही सतगुरु है, पिछले कर्म भोगता हूं :—

मन पांचों के वश पड़ा, मन के वश नहीं पांच।
जित देखूँ तित दौं लगी, जित भांगूँ तित आंच॥

न के वश में समस्त संसार है। प्रत्येक समय यह आपा बनकर कुछ से कुछ बनता रहता है सिबाय आग के और कुछ नहीं है :—

कबीरबैरी सबल है, एक जीव रिपु पांच।
अपने अपने स्वाद को, बहुत नचावें नाच॥

तुम देखो यह मन हमको नाच नचाता है। हम एक हैं और हमारे शत्रु पांच हैं। में तो पांच कमेन्द्रियां और पांच ज्ञानेन्द्रियां शत्रु समझता हूं। इनकी शत्रुता को दूर करने का उपाय केवल सतसंग है। और सतसंग भीं केवल उस पुरुष का हो जो स्वयं प्रकाश और शब्द में रहता हो। मेरे पास कई व्यक्ति सतसंग के बाद आते हैं, फसा हुआ हूँ क्या करूँ ? उनको उस समय मेरे पास से अध्यात्मिक लाभ नहीं हो सकता है उस समय मेरे से राय ले सकते हैं। उससे उनको पासारिक लाभ हो

सकता है। अध्यात्मिक लाभ उनको उस समय होगा, जब कोई संत अपने आप को प्रकाश और शब्द में रखता हुआ और वहां से डोरी जोड़े हुए सतसंग करता है उस समय उसकी रेडियेशन और उसके बचन दूसरों के जीवन बदलने के योग्य हो सकते हैं। बशर्ते कि दूसरे को भी इस माया के चक्र से निकलने की इच्छा हो। मेरे पास तो सतसंग में भी लोग कोई पुत्र के लिये, कोई मुकद्मे के लिये, कोई बीमारी के लिये, प्रसाद बनवाते हैं। काल और माया से कौन निकलना चाहता है। यह सब संसार का चक्र है ?:—

कबीर मन तो एक है, भावै जहां लगाय।
चाहे गुरु की भक्ति कर, चाहे विषय कमाय॥

मन तो एक है इसको जहां इच्छा हो वहां लगा लो। यदि भक्ति करनीं है तो पहले बाहरी गुरू केसतसंग में जाओ, सतसंग सुनो, श्रवन, मनन और निद्धयासन करो फिर शब्द और प्रकाश को पकड़ो या संसार के कार्य व्यवसाय करो या विषयों में जाओ :—

मनके मारे बन गये, बन तजि बस्ती मांहि।
कहैं कबीर क्या कीजिए, यह मन ठहरे नांहि॥

इस मन को ठीक करने के लिये लोग बनों में चले जाते हैं। यह तो गुरु ज्ञान और हिम्मत से ठीक होगा। यह सूरमाओं का काम है। प्रत्येक व्यक्ति इस मन को काबू करने के योग्य नहीं है। किन्तु सतसंग से इस मन को काबू करने की युक्ति मिलती है इस वास्ते सन्तों ने सतसंग की प्रणाली चलाई और साथ ही अपने कोई दोष लगा लिया ताकि अनधिकारी, संसारी, व्यर्थ अपना और उनका समय प्रश्नोत्तर में नष्ट न करें :—

तीन लोक चोरी भई, सबका धन हर लीन्ह।
बिना शीश का चोखा, पड़ा न काहू चीन्ह॥

इस मन का कोई अस्तित्व नहीं है। तीन लोक में चोरी हुई क्या हुआ ? बह जो वस्तु प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है, और

शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है, वह है हमारा धन हमारा आपा या हमारा "हैवना" है हमारा धन वह शरीर, मन और नीचे के बिचारों में जब आता है तो उसको कहते हैं चोरी होना। मन इसको अपनी ओर खींचता रहता है यह है चोरी :—

कबीर यह मन मसखरा। कहूं तो मानै रोष।
जा मारग साहब मिलै, ताहि न चालै कोष ॥

यह मन मसखरा तथा छलिया है, तुम जिस ओर जाना चाहते हो तुम को उस ओर नही जाने देता :—

मन मुरीद सन्सार है, गुरू मुरीद कोई साध।
जो माने गुरु बचन को, ताका मता अगाध ॥

जो व्यक्ति गुरू के बचन को मानता है। गुरू को पूजने वाला मानव गुरू को बाहरी सेवा करने वाला, या गुरू के नाम का ढ़िढ़ोरा पिटवाने वाला और गुरु गुरु करने वाला मन मुख है। गुरु के बचन को समझ कर प्रकाश और शब्द में लगाने वाला व्यक्ति गुरुमुख है। यह है मनमुख और गुरु मुख की व्याख्या।

मैंने समझाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। साधन करना आपका काम है। किन्तु यह साधन जल्दी होगा नहीं। जब मुझ जैसे सत्य प्रिय पुरुष को इतने वर्ष लगे तब कठिनाई से यह रहस्य समझ में आया तो मैं कैसे आशा करूँ कि जनसाधारण इस रहस्य को समझ जायेंगे। किन्तु मैंने समझाने में मार्ग बहुत सरल और सुगम करदिया है।

यह रहस्य आज तक किसी महापुरुष ने नहीं बताया इसके दो कारण हो सकते है। मैं इस सम्बन्ध में सन्तों को दोषी नहीं ठहराता। संसार को इस बस्तु की आवश्यकता नहीं है। इस वास्ते सन्तों ने जीवों को पहले भलाई की ओर लगाया कि प्रेम भक्ति और परोपकार के काम करो। भूखे को रोटी दो, प्यासे को पानी पिलाओ, रोगी को औषधि दो। चूँकि जीव मन को तो छोड़ नहीं सकते, इसलिये इनके बिचारों की प्रकृति

को अनुकुल बनाने के लिये यह धर्म और पन्थ में।

मैंने इस लोहे के पर्दे को तोड़ दिया है। जिनके भाग्य में है वह मेरी बात पर अमल करने का प्रयत्न करेंगे और जिनके भाग्य में नहीं है उनको मैं कुछ नहीं कह सकता।

गजल पीरे मुगाँ साहब ॥

जल्वा मिरा आयां है, हर सक जल्वा जार में।
शम्मो कमरा निहाँ हैं, दिले दागदार में ॥
मुझ में है पस्तहिम्मती, और हौंसले की रूह।
दोनों ही हालतें हैं, मेरे इखत्यार में ॥
शौके करार में कभो, होता हूं मुजखि ।
बह में करार खुद है, दिले बेकरार में ॥
हिज्र और स्ल वहम हैं, जब यह समझ गया।
रहता नहीं किसी के भी, फिर इन्तजार में ॥
हिरमानो यास दोनों का, मुझ से जहूर है।
दोनों की है जगह, दिले उम्मीदवार में ॥
दिल और रूह दोनों से, जब ऊँचा चढ़ गया।
"पीरेमुगाँ" फिर रहता नहीं, इन्तशार में ॥

परमदयाल जी के बचनामृत मानवता मन्दिर में २७-५-७१ को

फकीरा मैं दर्शन का प्यासा ॥टेक॥
तूतो ध्यान ज्ञान रस भोगी, मैं हूं चित्त उदासा ॥टेक॥
तेरे दरस के कारन प्यारे, निस दिन रहत त्रासा ॥टेक॥
आजा सूरत अपनी दिखाजा, पूरी करजा आसा ॥टेक॥

देर भई आ सतसंग में, अब मत कर मोहि निरासा ।।टेक।।
राधा स्वामी चरन शरन बलिहारी, गुरु को प्यारा दासा ।।टेक।।

राधा स्वामी आज सतसंग में यह शब्द पढ़ा गया है। आयु से ही उस मालिक को मिलने की तड़प में निकला था। सन् १९०५ के एक द्रश्य द्वारा मुझे विश्वास था कि वह मालिके कुल मेरे लिये मानवीय बोले में हुजूर दाता दयाल महर्षि शिव ब्रतलाल जी के रूप में आया हुआ है उस समय तो मैं उस मालिके कुल को जानता भी नहीं, किन्तु अब तो जानता हूं, पहिचानता हूं और उसमें रहता हूं। मैं उनके चरनों में गया, उनको मालिक का अबतार समझकर प्रेम करता था। मेरे उस प्रेम भाव के बदले मुझे यह उपरोक्त शब्द पत्र में लिखकर अपने सतसंग में बुलाया था। देर भई सतसंग में आ इसमें नुक्ते हैं, रहस्य हैं मैं समझता हूं कि उन्होंने मुझको सच्चे मालिक के दर्शन कराने के लिये मेरे साथ यहसारा खेल खेला प्रेम शब्द लिखे उत्साह दिया। अब देखो इस शब्द में वह लिखते हैं कि:—

तूतो ज्ञान ध्यान रस भोगी, मैं हूं चित्त उदासा।

आह ! ज्ञान कथने वाला भी भोगी है, ध्यान करने वाला भी भोगी है, भक्त भी भोगी हैं और योगी भी भोगी है। कैसे ? जैसे तुम स्त्री को भोगते हो तो तुम भोगी हो। शारीरिक प्रसन्नता लेते हो तो तुम भोगी हेतु बच्चों के साथ मोह करते हो तो तुम भोगी हो, अपने अन्तर में ईश्वर से प्रेम करते हो तो तुम भोगी हो और अपने अन्तर में गुरु के रूप के साथ प्रेम करते हो तो तुम भोगी हो।

संत कौन है ? जो भोगी नहीं होता। मैंने प्रण किया था जो कुछ मुझको राधा स्वामी मत में मिलेगा मैं संसार को बता जाऊँगा। वह बताता हूं। यही बात स्वामीजी महाराज ने कही है।

"भक्त उपासक योगी ज्ञानी, इन सब चक्कर खाया।

कभी यह बानियाँ पढ़ कर अपने मन में कहा करता था कि मैं कहां

फसगया। किस मत में फस गया जो यह कहता है :—

'भक्त उपासक योगी ज्ञानी, इनसब चक्कर खाया।"

मेरे मन में नाना प्रकार के भ्रम शंका सन्देह उत्पन्न हुआ करते है यदि स्त्री से भोग करने वाला और धन सम्पत्ति से भोग करने वाला इस संसार में फसा हुआ है तो आह ! राम–कृष्ण और गुरु से प्रेम करने और अपने अन्तर आनन्द लेने बाला भी तो भोगी है, वह कैसे निकलेगा संतों के मार्ग को साफ किये जाना चाहता हूं। तो दातादयाल जी वर्णन करते हैं:—

तूतो ध्यान ज्ञान रस भोगी, मैं हूं वित्त उदासा।

चित्त में क्या होता है ? चिंतन ! चित्त का काम चिंतन करना है किसी ने स्त्री का चिंतन किया, किसी ने धन का, किसी ने मान प्रतिष्ठा का, किसी ने राम का, किसी ने गुरु का किया। क्या अन्तर है ? दादा दयाल जी कहते हैं कि मैंतो चित्त उदासा हूं अर्थात मैं इस चिंतन से परे हूं :—

पिंड अन्ड ब्रह्मांड से पारा, वह है देश समारा।

पिंड में चिंतन है, अंड में चिंतन है और ब्रह्मांड ने चिंतन में आह ! तुम इस शब्द का अर्थ समझ सको। वह कहते हैं कि फकीर ! सतसंग में आ। क्यों आ ? तू तो भोगी है। मुझे संसार में कोई शब्द नहीं मिलते जो मेरे मन के भाव को व्यक्त कर सकें वह मुझे सतसंग में क्यों बुलाते हैं ? मैं तो उनका बड़ा प्रेमी था, योग का साधन किया करता था अपने अन्तर मैं उसके रूप से आनन्द लिया करता था तो उन्होंने कहा कि:—

तू तो ध्यान ज्ञान रस भोगी, मैं हूं चित्त उदासा।

वह कहते हैं कि मैं तो चित्त से उदास रहता हूं अर्थात मैं कोई चिंतन नहीं करता। किसी बात का चिंतन करना ही तो भोग है। संसार का भोग निचली श्रेणी का है मन का, प्रेम भक्ति और योग का भोग उससे ऊँचा है। आनन्द अवस्था में रहना करना भोग है जो

परमसंत होता है वह मालिक की जात से मिला हुआ होता है, वह चिंतन नहीं करता वह भोग में नहीं फंसता।

मैं संतमत का रहस्य खोले जारहा हूं। क्यों? मैंने यह प्रण किया था कि इस मार्ग पर चलूँगा और जो कुछ मुझे अनुभव होगया वह संसार को बताऊँगा। मैं अपना कर्म भोग रहा हूं किसी पर मेरा कोई अहसान नही है। सन्ती का मार्ग अति सूक्षम है। मुझे इस भोग से निकालने और बास्तबिक मालिक के घर अर्थात अपनी आदि अबस्था में पहुँचाने के लिये उन्होंने यह शब्द लिखा :—

तेरे दरस के कारन प्यारे, निस दिन रहत त्रास।
गुरु शिष्य का अहसान मानता है। क्या कह रहा हूं?
जो तेरे घर खाना खाये, उसका तू ममनून हो'
क्योंकि वह खाता है अपना, तेरे दस्तर खवान पर।।

जो भी मानव इस जगत में आ जन्म के समय वह पूरन नहीं होता। संसार में उसे बाह्य प्रभावों से समझ आती है ज्ञान उत्पन्न होता है। दाता दयाल जी मेरे से बहुत प्रेम करते थे और मेरा बहुत आदर-मान किया करते थे। उस समय में इस रहस्य को नहीं समझ सकता था।

हुजूर परम पुनीत राय बहादुर सालिग्राम साहब स्वामी जी महाराज के शिष्यथे, वह स्वामी जी महाराज से बहुत प्रेम करते थे जैसा कि मैं हुजूर दाता दयाल जी से करता था। उन्होंने धन से भी स्वामी जी महाराज की बहुत सेवा की, किन्तु मैं धन से हुजूर दाता दयाल की सेवा न कर सका। जो हजूर महाराज की भावना थी वह मेरी न थी। लोगों ने स्वामी जी महाराज के आगे हजूर महाराज की बहुत प्रशंसा की कि आपके शिष्य बड़े योग्य हैं और आपकी बहुत सेबा करते है तो स्वामी जी महाराज ने वर्णन किया कि क्या खबर कि मैं रायसाहब का गुरु हूँ या राय साहब मेरे गुरु हैं।

बस यह केबल एक पर्दा था जिसको मेंने खोल दिया है। क्यों ? इन सन्तों और महात्माओं ने आज कल इस गुरु इज्म को एक पाखन्ड का जाल बनाया हुआ हैं। जीव निर्बल, अबल और अज्ञानी हैं। उनके अज्ञान का अनुचित लाभ उठा कर गुरु जनों ने इनको बार बरदारी का जानवर तथा गुरु पशू बनाया हुआ है। गुरु तत्व संसार से लोप होगया है। इसलिए मौजाधीन या अपने कर्म भोग बश मैं इस रहस्य को खोलने के लिए विवश होगया।

मैं दाता दयाल जी के पांस जब लाहौर जाया करता था तो उस समय जो सतसंगी वहां विद्यमान होते थे तो हजूर दाता दयाल जी उन से कहा करते थे कि मेरा फकीर मुझे तारने के लिए और मेरे बन्धन काटने के लिए आया है। उस समय यह बात मैं नहीं समझ सकता था किन्तु अब समझता हूं।

तो दाता मुझे सतसँग में बुलाते हैं। उन्होंने मुझे समझाने के लिए सैन बैन किया, कितने ही शब्द और पुस्तक मेरे नाम लिखीं। अब मैं उस सत्यता को समझता हूं। इस बात को समझने के लिए उन्होंने मुझे यह काम दिया था कि मैं अपने आदि घर पहूँच जाऊं। मेरे अन्तर खोज थी। जब श्री कृषक जी कमालपुर बाली माई और अन्य सतसंगियों ने अपने अनुभव वर्णन किए तो मुझे जो बात दाता दयाल जी समझाना चाहते थे वह मेरी समझ में आगई। मेंने आप लोगों को रहस्य बता दिया कि हमारा आदि घर चिंतन से परे है। शरीर में रहकर चित्त चिंतन करता है। बड़ी २ गुत्थियों को सुलझाता है। मन में बिचार की शक्ति क्या है और आत्मा की शक्ति क्या है ? छब तक मानव इस में फंसा हुआ है वह अपने आदि घर नहीं जा सकता। आदि घर को कौन समझ सकता है। आदि घर है सत,अलख, अगम से परे। हुजूर महाराज भी मेरी भांति फंसे हुए थे जैसे कि मैं दाता दयाल जी के प्रेममें फंसा हुआथा, उनको भी यह काम इस भोग से

निकलने से लिए दिया गया था। अब उनको यह ज्ञान हुआ, जैसे मुझको हुआ तो उन्होंने इस ज्ञान को रोचक विधि से वर्णन किया और मैंने यथार्थ रूप में वर्णन किया। उनका कथन है:—

सखारी मोहि मत रोको, मैं तो जाऊंगी सतगुरु पास।
सतगुरु मेरे अधर बिराजें, जहां सन्तन का बासा।
पिंड अन्ड ब्रहमाँड से न्यारा, सत अलख अगम निवास।

हुजूर महाराज कहते हैं कि मुझे सत गुरु के पास जाने से मत रोको। वह सतगुरु संत, अलख और अगम में रहता है पिंड, अन्ड और ब्रहमांड से परे वही अवस्था है जो चिंतन से परे है। मैं जानता हूं कि इस सोयान तथा पद तक कौन जायगा:—

कठिन नाम है कठिन काम है, कठिन फकीर कमाई।
जग के भव दुःख नाशें पल में, जब फकीर जग आई॥

कितनी कठिन और कितनी ऊंची सोपान है मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। आज संतों के मार्ग का और संतों की की गति का वर्णन कर रहा हूं। संत वह है जो चिंतन नहीं करता। मैं आगे नहीं जा सकता था क्यों कि मैं तो ज्ञान ध्यान रस भोगी था। सिद्धि, शक्ति आगई थी आनन्द लेता था और बाल की खाल उतारता था। वह मुझे सतसंग में बुलाते हैं।

"आजा सूरत अपनी दिखा जा, पूरी करजा आसा।"

गुरु शिष्य का अहसान मानता है। गुरु संगत की की सेवा करते है सिक्ख गुरु साहिबान संगत का पंखा झुला करते थे। क्यों ? यह तो उनको पता होगा। मैं कृषक जी महाराज कमालपुर वाली माई और दूसरे सतसंगियों का बड़ा आदर मान करता हू। मुझे खेद है कि मेरे पास धन नहीं है वरना मैं धन से भी इनकी सहायता। मेरे सच्चे सतगुरु हुजूर दाता दयाल जी ने मुझे इस संत मत या वास्तविकता, [illegible]ता यथँता का सार भेद देने के लिथे मेरे साथ यह खेल खेला।

अभी तक संसार की चेतनता आती रहती है। उसमें आकर दाता दयाल जी का अहसान मानता रहता हूं। वह परम पुरुष और पूरन धनी थे। उन्होंने मेरी प्रकृति के अनुसार मेरे भावों और विचारों को उभारा और उभार कर मलिया मेंट कर दिया और यही स्वामी जी की स्तुति हुजूर महाराज जी ने की है:—

मेरे परम पुरुष राधास्वामी दाता रे, मेरे जीवन के प्रान अधारे।
भोग मेरे अन्तर में दरसाये, दया करके काट गिराये ॥

और अंत में वर्णन करते हैं कि:—

घात माया ने किये वहु भांति, निरख दे बख्शी मोहि शान्ति।

परम शान्ति सत अलख और अगम में है अर्थात अपने ही निज रूप में है। वहां क्या होता है?—

नहीं खालिक मखलूक न खिलकत, कर्त्ता कारनकारज दिक्कत।
राम रहीम करीम न केश व कुछ नहीं कुछ नहीं था सो।
अल्लाह खुदा रसूल न होते,पीर मुरीद न दादा पोते।

चूंकि मैंने प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा इस लिये कहता रहता हूं :—

देर भई आ सतसंग में, मत कर अब मोहि निरास।

जैसे मुझे सतसंगियों से ज्ञान हुआ संभव है हुजूर दाता दयाल जी को भी मेरी अज्ञान की भक्ति से ज्ञान प्राप्त हुआ हो। जिस प्रकार मैंने वर्णन किया है इस तरह से सतसंगों की प्रणाली नहीं रहती पंथ नहीं चलते भेंट चढ़ावा नहीं आता। मेरे इस स्पष्ट वर्णन से कौन ऐसा व्यक्ति है जो मुझे गुरू समझकर मेरी मेरी सेवा करेगा परन्तु मैंने दाता दयाल जी की सेवा की है। मुझे सन १९१९ में यह ज्ञान हो गया था उस समय परिपक्व नहीं था अब परिपक्व है। में दाता दयाल जी की ओर सतसंगियों की सेवा करता रहता हूं दाता दयाल जी ने मुझे यह रहस्य और सत्यता बतादी। मैंने अपने अनुभव को उचित शब्दों में

व र्ण न कर दिया और गुरु ऋण से उऋण हो चला। दाता दयाल जी ने आदेश दिया था कि फकीर बोला छोड़ने से पूर्व शिक्षा को बदल जाना। शिक्षा तो वही है केवल वर्णन शैली को बदला है ताकि सत्यता के खोजियों को जो सचमुच अपने घर जाना चाहते हैं सच्चा शब्द रचना ए सत गुरु जिसके चरन प्रकाश हैं वह मिल जाय।

हुजूर महाराज ने अपनी प्रेम वानी में लिखा है कि बाहर का गुरू दया करके जीव की प्रकृति को देख कर उसके साथ खेल करता हुआ उसको पारब्रह्म और शब्द ब्रह्म के साथ मेल करा देता है। यही सनातन धर्म और गरुण पुराण कहता है।

मैंने जो समझा समझाया जो मेरे अनुभव में आया वह कहा हो सकता है मेरा अनुभव गलत हो, मैं किसी बात का दावा नहीं करता यदि दूसरे संतों को अपनी वानियां रचने का अधिकार है या था तो मुझे भी अपने जीवन के निज अनुभव वर्णन करने का का अधिकार है। में नहीं चाहता कि लोग मेरे पीछे लगें। जिनके भाग्य में है वह तो चलेंगे ही जिके भाग्य में नहीं है वह न चलें। सबको राधा स्वामी।

उपदेश सुरत शब्द के अभ्यास का

भजन कर मगन रहो मन में ।। टेक ।।

जो जो चोर भजन के प्रानी सो सो दुक्ख सहें।
आलस नींद सतावे उनको, नितनित भर्म बहें ।।
काम क्रोध के धक्के खावें, लोभ नदी मैं डूब मरें।
गुरु संग प्रीत करें नहि पूरीं, ध्यान न डौर गहें ।।
तृष्ण अग्नि जलें निस बरसा, नर्कन माहि पड़ें।
संतन साथ विरोध बढ़ावै। उलटीं बात कहें ।।
सतसंग महिमा मूल न जानें। भेड़ चाल में नित फंसें।

धन और मान भोग रस चाहें, रोग संग में आन फसँ ।।
भाग हीन मतिहीन पिरानी, नरदेही बरबाद करें ।
ऐसीं दशा माहिं नित बरतें, हम क्यों कर समझाय सकें
साध गुरु का कहा न मानें, मनमत अपनीं ठान ठनें ।
खर कूकर सम वे नर जानों बिरथा उदर भरें ।।
जमपुर जाय बहुत पछतावें, वहां फिर उनकी कौन सुने ।
जन्म जन्म चौरासी भोगें, यह शरीर फिर नहीं धरें ।।
दुर्लभ देह मिली यह औसर । ऐसी कर जो बात बने ।।
सतगुरु संरन पकड़ले अबकी । तौ सब काज सरें ।।
हित का बचन दयाकर बोलें । तू नहिं कान सुने ।।
अन्धाबहरा फिरे जन्म में । कुल कुटंब तेरी हानि करे ।।
कर सतसंग मान यह कहना । कान आंख फिरदोऊ खुलें ।।
देखे घट में जोति उजाला । सुने गगन में अजब धुनें ।।
सुन्न जाय त्रिबेनी न्हाबै । हीरे मोती लाल चुने ।।
महासुन्न में सुरत चढ़ावै । तब सतगुरु तव संत चलें ।।
भँमर गुफा की बंसी बाजी । महाकाल भीं सीस धुने ।।
अब चढ़गई पुरुष दरबारा । बहां जाय धुन बीन गुने ।।
ले दुरबीन चली आगे को । अलख अगम का भेद भने ।
यहां से आगे चली उमंग से । तब राधास्वामी चरन मिले ।।
मिला अधार सार पद पाया । लीला वहां की कहे न बने ।

मानवता मन्दिर में परम दयाल जी के बचनामृत २६-५-७१ को

गुरु चरन से लग कर तर गया ।

राधास्वामी । आज यह शब्द सतसंग में पढ़ा गया जो कि प्रथम

पृष्ठ पर दिया गया है। यह शब्द मैंने सुना। अब अपने अन्तर प्रवेश करता हूं। लोगों को उपदेश देने के बजाय अपने आप से पूछता हूं कि फकीरचन्द ! गुरु की शरण में जाने से तुम को क्या मिला। संसार ने यह समझा हुआ है कि बस गुरु कर लो और तुम तर जाओगे हुजूर दाता दयाल जीं के इस शब्द में लिखा हुआ है कि गुरु कीं संगत से और गुरु कीं चरन शरन से प्राणी तर जाता है। तर के कहां जाता है ! मानव के जीवन में शारीरिक, मानसिक और आत्मिक बोध भान हैं। जीवन इन बोध भानों में फंसकर दुःख और सुख उठाता रहता है। कभी चिन्ता है, कभी अचिन्ता है, कभी हर्ष है, कभी शोक है, जो प्राणी इस बोध भानों के चक्कर में आया हुआ है किन्तु वह इनसे बचने की इच्छा रखता है उसके लिए यह गुरुमत हैं। जो इससे बचना नहीं चाहता उसको गुरु-मत से पूरा लाभ नहीं हो सकता। हां ! एक लाभ हो सकता है कि वह अपने बोध मानों को श्रेष्ठ अवश्य बना सकता है। जिस प्रकार शरीर यदि रोगी है तो औषधि से स्वस्थ हो जाता है यदि तुम्हारे मन में कोई चिंता या भ्रम है तो गुरु के सतसंग से अपने बिचार को बदल लेने से कुछ समय के लिए वह चिंता दूर हो सकती है किन्तु सदैव के लिए इससे बचना तब होगा जब तुम गुरू की संगत में जाकर सच्ची समझ और सच्चा ज्ञान प्राप्त करके साधन और अभ्यास से शरीर, मन और आत्मा से परे चले जाओगे। जब परे चले जाओगे तब तुम इस भव जाल से निकल सकते हो। भव जाल क्या है ? जीवन ही भव का जाल है। हमारा शरीर, मन और प्रकाश में आना ही भव जाल है, यही भव सागर है:—

गन्दे जल मैं पड़ी निर्गली, शुद्ध हो गया पानी।
तैसे हीं गुरु के सतसंग से, निर्मल होगये प्राणी ।।

जिस प्रकार मैले पानी में फिटकरी डालदेने से पानी का सारा मैल नीचे बैठ जाता है ऐसे ही सतसंगीं के बचनों को समझने से और

रेडियेशन से मन शुद्ध होजाता है और शंका और भ्रम सब चले जाते हैं। अपने आप से पूछता हूं कि तेरामनकैसे शुद्ध हुआआनन्द दायक तो रहा हुजूर दाता दयाल जी के चरणों से लगकर मेरे मन को प्रसन्नता तो मिली मैं चूंकि उनसे अत्यन्त प्रेम करता था, उनका श्रद्धालु विश्वासी, और आशावादी था, उससे मेरे मन में आनन्द, प्रसन्नता, प्रेम और उत्साह आया। मैंने दाता दयाल जी को महर्षि शिववृत लाल जी समझ कर नहीं पूजा मैं उनको मालिक का अवतार समझता था मेरे पिछले कर्म अच्छे थे जो मेरा उन पर विश्वास बैठ गया था। इस बिचार और विश्वास ने मुझको सब कुछ दिया किन्तु भव सागर से पार नहीं हो सका इस भव सागर से पार करने के लिए और मुझे यह रहस्य और भेद देने के लिए उन्होंने मुझे यह गुरु पदवी दी थी।

जब से मुझे श्री कृषक जी ने, कमालपुर वाली माई ने और अन्य सहस्त्रों सतसंगियों ने बताया कि मेरा रूप उनके अन्तर प्रगट होकर उनकी सहायता करता है। चूंकि मैं नहीं होता। इसलिए मुझे यह निश्चय होगया कि मेरे अन्तर जितने विचार फुरते हैं यह हैं, नहीं बल्कि यह माया है। इसलिए इस अन्तिम आयु में मैं यह कहने का साहस करता हूं कि मुझे सतसंगियों ने तारा। मुझे यह समझ आगई कि मन के जितने भी बोध-मान हैं, यह काल और माया है। इसलिए मैं अब कहां रहने का प्रयास करता हूं? इस भवसागर से ऊपर जहां कि मेरा अपना ही तत्व है, एक अस्तित्व हैं एक सतपना है, एक है पना है, वहां रहने का प्रयत्न करता रहता हूं। वहां ठहरने से मुझे क्या मिलता है। इस शरीर मन और प्रकाश में रहते हुए जो मुझे विक्षेप होता रहता था और दुःख और सुख का मुझ पर प्रभांव होता था वह नहीं होता। मैं इसका यह अर्थ समझता हूं :—

बह अपने कर्म को कर गया, गुरु चरन से लग कर तर गया।

हम इस संसार में आते हैं और फंसजाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति सुख

शान्ति और अचिन्त पना चाहता है। संसार में जितना भी प्रयत्न हो रहा है सब सुख शान्ति और अचिन्ता के लिए हो रहा है।

यह और बात है कि कोई शारीरिक सुख चाहता है, कोई मानसिक, और कोई आत्मिक किन्तु सुख की चाह प्रत्येक व्यक्ति में है। मुझको उस परम सुख और परम शान्ति का अनुभव होगया।

नीम बबूल पिलास सुवासत, चन्दन का संग पाई।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, सतसंगी की भलाई।

नीम कड़वा होता है, बबूल और पिलास में भी कोई सुगन्धि नहीं होती यदि यह चन्दन के वृक्ष के निकट हों तो इनमें भी चन्दन क थोड़ी बहुत सुगन्धि आजाती है। ऐसे ही किसी बिदेह और जीवन मुक्त पुरुष की संगत से, उसकी रेडियेशन से दूसरे व्यक्तियों की शारीरिक और मानसिक अशान्ति कम हो जाती है और उनके अन्तर शारीरिक, मानसिक और आत्मिक शान्ति के संस्कार उत्पन्न हो जाते हैं :—

काल कर्म भय टर गया, गुरु चरन से लगकर तर गया।

काल कर्म भय टर गया। अहा। हा।। हा।। दाता दयाल जी के शब्दों में समुद्र भरा हुआ है। गुरु की संगत से काल, कर्म का भय टर जाता हूँ। काल कहते हैं समय को, समय की जो परिस्थितियां आती हैं और उनसे जो व्यक्ति को दुःख और सुख होता है वह गुरु की संगत से उसकी रेडियेशन से, उसके बचनों से और साधन से क्रम हो जाता है। वह संसार में रहता हुआ घबराता नहीं, चिंता और फिक्र नहीं करता।

अब देखो पूर्वी बंगाल में क्या हो रहा है किन्तु मुझे यह बिचार ही नहीं आता कि वहां क्या हो रहा है। मुझे यह निश्चय हो गया है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्म का फल भोगता है। पिछले जन्म के जैसे कर्म होते हैं, किसी का धन लिया हुआ होता है, वह इस जन्म में हमको तंग करते है और हमारा धन लेते हैं। इसलिए यह जो परिवर्तन हो

रहा है इसका कोई भी प्रभाव मेरे मस्तिष्क पर नहीं होता:—

काठ की नौका लोहा लादे, वार पार ले जाई ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, अधमधम तर जाई ।।

लोहा पानी में डूब जाता है किन्तु जब बेड़ी में लाद दिया जाता है तो बेड़ी उसको पार ले जाती है। ऐसे ही हमारे मलिन बिचार सत-संग द्वारा हम पर कम प्रभाव करते हैं और यदि हम और ऊंचे चले जायं तो नितान्त ही प्रभाव नहीं करते:—

परदेश को तजकर घर गया, गुरु चरन से लग कर तर गया ।

परदेश क्या है ! हम कही से आये हुए है और हमने कहीं जाना है यह हमारा देश नहीं है यहां हमारा अस्थाई विश्राम है कोईदस वर्ष जीआ कोई बीस वर्ष जीआ। कोई पचास वर्ष और कोई सौ वर्ष जीआ। यह तो अपना देश है नहीं:—

यह तो नहीं तेरा देश, देश है बेगाना ।
यहां सब बेगाने बसें, कोई नहीं यगाना ।।

हमने अपने त्रुटि पूर्ण बिचारों से दूसरों को अपना माना हुआ है। हम यह भूल गये हैं कि हम यात्री हैं। इस भ्रम में आकर हम में "मैं पना" और "त् पना" आगया है। गुरु के सतसंग से मैं और त् का भ्रम जाता रहता है; बशर्ते कि कोई गुरु की संगत करे। जिस सतगुरु को अपने घर का ही पता नहीं उसके सतसंग से दूसरों को लाभ नहीं पहुंच सकता—

अमृत रस मुख में जब टपका, जीवन का रस पाया ।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, भूल न व्यापै माया ।

जैसे अमृत से या अच्छा पदार्थ खाने से हमको स्वाद आता है, ऐसे ही जिसको सतपुरुष के सतसंग का स्वाद आना आरम्भ हो जाता है उसको माया नहीं व्याप्ती। माया क्या है ? जितने भाव विचार हमारे अंतर उत्पन्न होते हैं यही माया है। माया बुद्धि को कहते हैं। दाता

दयाल जी ने अपनी पुस्तकों में माया की बहुत व्याख्या की है। मा का अर्थ है मापना और या का अर्थ यन्त्र। जिस वस्तु से कोई वस्तु मापी जाती है उसका नाम माया है। जिसकी बुद्धि निर्मल हो जाती है उसको फिर माया नहीं व्यापती, दाता दयाल जी का या ऋषियों का क्या भाव है, यह मुझे पता नहीं। किन्तु मैंने जो समझा है वह अपने कर्म भोग वश कहे जाता हूँ। जबसे मुझे यह ज्ञान होगया कि मैं तो किसी के अन्तर नहीं जाता किन्तु मेरा रूप लोगों के अन्तर प्रगट होकर उन की सहायता करता है तो मुझे यह निश्चय होगया कि मेरे अन्तर भी जो विचार उठते हैं यह भी सब कल्पित हैं। यही हमारे हिन्दू शास्त्र कहते हैं। कि जब तक तुमको इस माया का ज्ञान नहीं होगा और तुम इस ज्ञान पर आरूण नहीं होंगे तब तक तुम इस माया के चक्र से नहीं निकल सकते:—

भव फांस कटा कर तर गया, गुरु चरन से लग कर तर गया।
दो नाले का जल गंगा से, मिलकर गंग कहावे।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, नर सत जीवन पावे॥

नदी और नाले का अशुद्ध पानी गंगा में मिल कर गंगा बन जाता है ऐसे ही सत पुरुष के सतसंग से प्राणी का मन निर्मल हो जाता है सांसारिक दृष्टि कोंण से देखो एक व्यक्ति झूंठा है और मलीन भी है, यदि वह किसी अच्छे पुरुष की संगत में चला जाता है तो उसका आदर भी होगा और मान भी होगा एक निर्धन स्त्री का एक धनवान के साथ विवाह होजाता है तो उसकी वही मान प्रतिष्ठा है जो उस धनी की है। इसलिए जो व्यक्ति किसी सतपुरुष की संगत में रहते हैं, उनको इस सतसंग से यश और मान मिलता है:—

जिसे गुरु न मिला वह मर गया, गुरु चरन से लग कर तर गया।

प्रत्येक व्यक्ति को गुरु करने का आदेश है। मैं तो आदेश नहीं कहता। मैं तो कहता कि यदि कोई व्यक्ति सच्चा खोजी और जिज्ञासू है तो उसके अन्तर गुरु धारण करने का प्राकृतिक भाव है, क्योंकि

मानव का जीवन कुछ चाहता है। जब तक उसकी यात्रा पूरी नहीं होती तब तक उसकी खोज समाप्त नहीं होती, यदि वह अपनी आत्मा को सच्चा नहीं रखता, संसार की धन सम्पत्ति और मान प्रतिष्ठा में फँस गया है किन्तु उसकी खोज सच्ची है तो उसकी वह खोज उसको किसी ऐसे स्थान पर पहुँचा देगी जहां कि उसका ध्येय पूरा होजायगा। परम सुख और परम शान्ति प्राप्त करने का जन्म सिद्ध अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को उत्तर दायित्व में मिला हुआ है।

धर्मशाला से एक व्यक्ति आया था उसने निरंतर चार महापुरुषों से नाम लिया फिर वह मेरे पास आया क्यों आया ? वह प्राणी सत्यता प्रिय पुरुष है।

जिस व्यक्ति को संसार कों हविश नहीं और उसको संसार का अनुभव होजाता है तो प्रकृति उसकी मांग और पूर्ति के नियमानुसार **Demand and Supply** उसको ऐसे स्थान पर पहुँचा देती है जहां कि उसको वह वस्तु मिल जाय:—

मैला बस्त्र मिल साबुन से, उज्जवल निमंल होता।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, जीव मुक्ति सुख सोता।

हमारे अन्तर में हमारी बासनायें हैं, यह हमारा मैल है। मैल को दूर करने के लिए साबुन चाहिये, गुरु के सतसंग से जब ज्ञान होजाता है तो फिर साधन करने से यह मैल दूर होजाता है और प्राणी मुक्त होजाता है।

गुरु संस्कार से भर गया, गुरु चरन से लगकर तर गया।

देखो यहां यह तीन शब्द हैं, इनको समझो। एक गुरु के चरन दूसरा गुरु का सतसंग और तीसरा गुरु का संस्कार। सतसंग तो यह है, जैसे अब तुम बैठ कर सतसंग कर रहे हो तुम्हारे अन्तर में जो प्रकाश है, वह वास्तविक चरन हैं गुरु के। संस्कार क्या है ? गुरु एक विचार देता है। जब मैं १९०५ में गुरु महाराज जी के चरनों में गया था तो उन्होंने मुझे संस्कार दिया और कहा—फकीर ! "त् फकीरों में च

होगा"। यह जो उनके शब्द थे, यह उनका संस्कार दिया हुआ था।

जब कृषक जी मेरे पास आये तो मैंने इनसे कहा–**Krishak The Great** महान कृषक का इसलिए ऐ कृषक ! कभी किसी को निबल बिचार न देना। यह संतमत की कुन्जी है। कुछ वर्ष हुए नन्दलाल सच देव मेरे पास आये। मैंने कहा–नन्दलाल ! तुम अपने कर्म से संसार को सुख पहुँचाओगे। उन्होंने वह बिचार लेलिया अब वह पर-उपकारी हैं, सबकी सहायता करते हैं, सामाजिक क्षेत्र में काम करते हैं। यह है संस्कार।

यहां प्रति दिन एक माई आती है, वह मुझे कहती है–मुझे लेलो मैं भी कह देता हूं कि ले चलूंगा यह क्या है ? यह एक संस्कार है। मैं आपको संस्कार का अर्थ बता रहा हूं। किसी कोअच्छा बिचार बताना ही संस्कार है। कभी किसी बच्चे को नालायक मत कहो। यह सारा का सारा बिचार का खेल है। किसी बिचार शील पुरुष का दिया हुआ संस्कार कभी खाली नहीं जाता। किन्तु संस्सार लेने वाला विश्वासी होना चाहिए।

मैं अपने छोटे भाई राय साहब को जबकि वह छोटा ही था अ-पने साथ लाहौर हुजूर दाता दयाल जी के दरबार के दरबार में लेगया उन्होंने पूछा कि इसका क्या नाम है ? मैंने निवेदन किया कि हुजूर इस का नाम ढ़ेरूमल है ! उन्होंने कहा–यह तो बड़ा भद्दा नाम हैं। मैंने प्रार्थना की कि इसका नाम रख दीजिये। आदेश हुआ कि कल प्रातः मेरे पास लाना। दूसरे दिन जब प्रातः जब उसको लेकर मैं गया तो उन्होंने उससे कहा–तेरा नाम आज से सुरेन्द्र नाथ है। तू देवताओं का राजा इन्द्र और इन्द्र का भी नाथ है।

आदेश हुआ कि इसे कुरसी पर बिठा दो। किन्तु सभ्यता के नाते हम उनके सामने हन कुरसी पर नहीं बैठा सकते थे। चूंकि ऐसी आज्ञा थी इस लिए दो मिनट कुरसी पर बिठा दिया। अब अन्तिम अवस्था में वह एक महान थेदान्ती हो गया है यह है गुरु का संस्कार। गुरु के

चरन, गुरु का सतसंग और गुरु का संस्कार। यही तीनों वस्तुयें काम करतीं हैं:—

सुरत शब्द का मेल मिले जब सुरत हो शब्द के रूपा।
तैसे ही गुरु के सतसंग से, पड़े न कोई भव कूपा।
अंतर का शब्द तो पीछे आयेगा, पहले बाहर के गुरु का शब्द है। जब तक बाहर के गुरु के बचन के साथ तुम्हारा मेल नहीं है तब तक तुम अन्तर जा नहीं सकते। आजकल के सतसंगी और गद्दीपत कट्टर और पक्षपात रहित नहीं है। यदि इस में पक्षपाती हैं, इनमें घृणा है। जो गुरु इनको संसार देने वाले हैं उनकी अपनी रहनी पक्षपात रहित नहीं है। यदि इनमें पक्षपात और द्वेष न होता तो गद्दियों केलिए झगड़े क्यों होते, मुकद्मे बाजी क्यों होती और एक दुसरे की निन्दा क्यों होती गुरु भी गुरु होना चाहिये आजकल की गुरुयायी जीविका उपार्जन का साधन बन गई है। आजकल तो धन-सम्पत्ति, मान-प्रतिष्ठा डेरे, धामों के लिए गुरुयाई की जाती है।

इस दशा को देखकर प्रकृति ने मेरे मस्तिष्क को हिलाया और मैंने गुरुमत और उसकी शिक्षा को स्पष्ट कर दिया ताकि जिनके भाग्य में है और जो सचमुच इससंसार से तरना चाहते है उनको सच्चा और सच्चा मार्ग मिल जाय पहिले बाहर के गुरु के बचन होते हैं उनसे जीवों के भ्रम और शंकायें चली जाती हैं। फिर अन्तर में साधन करना पड़ता है, और उस शब्द स्वरूपी गुरु को पकड़ना पड़ता है। राधास्वामी नाम क्या हुआ ? सुरत और शब्द का मेल। बाहर के गुरु के बचनों को समझना, फिर अन्तर में शब्द को पकड़ना।

आज का सतसंग मैंने किसी को नहीं कराया। अपने ही आप को कराया है। अपना कर्म भोगता हूं। यदि मुझे अपना कर्म भोगने से किसी को लाभ हो जाय तो मुझे बहुत प्रसन्नता हैं तुम लोग बड़े भाग्य शाली हो जिन को एक निर्बन्ध पुरुष का सत्संग मिलता है बड़े ही अच्छे कर्म हों तो मनुष्य जन्म मिलता है और उससे भी बढ़कर बड़े

अच्छे भाग्य हों तो किसी सत पुरुष से मेल होता है। सबको राधा स्वामी।

परम दयाल जी का दशहरा सन ७१

टूर प्रोग्राम

२४—८—७१	होशियार पुर से प्रस्थान ६॥ बजे प्रातः
,, ,, ,,	जगाधरी आगमन ५॥ बजे संध्या
२५—८—७१	जगाधरी सतसंग प्रातः संध्या।
२६—८—७१	जगाधरी से कार द्वारा सरसों हेरी को प्रस्थान
२७,२८—८—७१	आगमन सरसोंहेरी, सतसंग सरसोंहेरी।
२९—८—७१	प्रस्थान सरसोंहेरी से सहारनपुर,मुरादाबाद,बिला-
,, ,, ,,	री कार द्वारा मुरादाबाद से बिलारी आगमन
३०-३१-८-७१	बिलारी सतसंग
१—९—७१	,, ,,
२—९—७१	बिलारी से प्रस्थान राधास्वामी धाम ज्ञानपुर रोड
,, ,, ,,	को रेल द्वारा आगमन राधास्वामी धाम में
३—९—७१ से)	तक राधास्वामी धाम में विश्राम और सतसंग
१८—९—७१)	
,, ,, ,,	कानपुर के लिए रेल द्वारा प्रस्थान
,, ,, ,,	आगमन कानपुर ८-५ बजे शाम
१९-२०-२१-९-७१	तक तीन दिन कानपुर सतसंग
२२—९—७१	कानपुर से नई देहली को रेल द्वारा प्रस्थान
,, ,, ,,	नई देहली आगमन १६-५० पर
१३ से ३०—९	देहली विश्राम व सतसंग दशहरा
और १-१० ७१	देहली दशहरा सतसंग सलवान कालिज में

२–१०–७१ नई देहली से प्रस्थान जालन्धर होशियारपुर

३–१०–७१ आगमन होशियारपुर

नोट—मौजाधीन इसमें घटा बढ़ी नहींहोसकतीहैयह परिबर्तन शील है।

शुभ सन्देश

शुभ सन्देश

वार्षिकउत्सब राधास्वामी धाम, ज्ञानपुर रोड जि० बाराणसी

—०—

प्रेमी भाईयो व बहिनो।

परमसन्त परम दयाल हुजूर फकीर साहब जी महाराज "शिव समाधि" राधास्वामी धाम, रेलवे स्टेशन ज्ञानपुर रोड, जिला-वाराणसी में २ सितम्बर सन १९७१ को पधार रहें हैं। तथा १५ सितम्बर तक प्रति दिन सतसंग करावेंगे। प्रेमीजनों के विशेष आग्रह पर ही हुजूर ने अत्यन्त कृपा करके अपने अमूल्य समय का अधिकांश भाग महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज की समाधि व राधास्वामी धाम पर देने की कृपा की है।

अत: आप सबसे अनुरोध है कि इस शुभ अवसर पर अधिक से अधिक संख्या में उपस्थित हों तथा हुजूर के अमूल्य प्रवचनों से अपना जीवन सार्थक बनावें।

परम दयाल जी के प्रवचन २३-६-७१को

सुगना बोल तें निज नाम ॥ टेक ॥

आवत जात बिलम्ब नहीं लागे, मंजिल आठो याम।
लाखों कोस पलक में जावे, कहूं न करे आराम ॥
हाथ पांव मुख पेट पीठ नहीं,नहिं लाल न सेत न श्याम।
पंखन बिना उड़े निस बासर, सीत लगे नहीं घाम ॥
वेद कहे सरगुन के आगे, निर्गुन का विश्राम।
सरगुन निरगुन तजो सुहागिन, जाय पहुँच निज धाम ॥

लाल गुलाल बाग हंसन में, पंक्षी करे आराम ।
दुख सुख वहां कहीं न व्यापै दर्शन आठौ याम ॥
नूर ओढ़न नूरे डासन, नूरे का सिरहान ।
कहें कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरु नूर तमाम ॥

राधास्वामी यह शब्द पढ़ा गया। कुछ लोग राजस्थान से और कुछ मेरठ से आये हुए हैं। यह पता नहीं मुझे क्या समझ के आये हैं। किन्तु अनुमान से संभवतः सतगुरु समझ के आये होंगे। इस शब्द की अन्तिम कड़ी है:—

नूर ओढ़न नूर डासन, नूरे सिरहाना ।
कहें कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरु नूर तमाम ॥

यदि तुम मुझे सतगुरु समझके आये हो तो मेरी क्या ड्यूटी है ? तुनको असली और सच्चे सतगुरु का पता देना। मुझे असली और सच्चे सतगुरु का पता तुम सतसंगियों ने दिया। चूंकि क्योंकि मेरे सिर पर ण है इसलिए मैं असली सतगुरु का पता तुम लोगों को देता रहता हूं। अब प्रश्न रह उत्पन्न होता है कि हम सतगुरु क्यों धारण करते हैं। धर्मों और पंथों में क्यों सम्मिलित होते हैं ? इसलिए कि हमारे अन्तर कोई बस्तु है, उसको जीवन कहलो। जबसे उसको चेतनता आती है वह दौड़ती ही रहती है। कभी संसार के झगड़े, कभी मान प्रतिष्ठा के झगड़े, कभी मुकद्दमे के झगड़े, कभी ईश्वर से मिलने के और कभी भक्ति, योग, ज्ञान के झगड़े। वह इन में फंसी रहती है। तो जिसका जीवन इन झगड़ों से घबरा जाता है और अन्त होजाता है तो वह आराम करना चाहता है। जैसे कि तुम सारे दिन काम करते करते थक जाते हो तो फिर ऐसा सोना चाहते हो कि तुम संसार को भूल जाओ तो फिर सुख शान्ति कहां है ? संसार को भूल जाने में। किन्तु संसार को भूलने की इच्छा तो वह करेगा जो पहिले थक जायगा। जो थका हुआ ही नहीं है उसे सोने की क्या आवश्यता है। वह तो दौड़ना, चलना और काम करना चाहेगा। इसलिए संतमत में दोनों ही निवृत्ति और

प्रवृत्ति मानी है। प्रवृत्ति मार्ग क्या है ? खूब दौड़ो, खूब भागो, खूब चलो, खूब संसार में फंसो। यह शिक्षा नवयुवकों के लिए है कि पहिले ब्रह्म बनो, खूब बढ़ो संसार में रहते हुए खूब उन्नति करो। मन में रहते हुए बुद्धिमान बनने के विचार रक्खो। धनवान बनने का प्रयास करो। जब थक जाओगे जब तुमको सतनाम के नाम की इच्छा होगी। जन साधारण के लिए नाम नहीं है। संसार में सुखी रहने के लिए सर्व प्रथम धन है। तुमको जीवन मिला है, इसे खूब काम में लाओ, किन्तु यह किसी संत सतगुरु के आधीन है तो वह तुमको जीवन की यात्रा भी करा देगा। और तुमको पथ भ्रष्ट भी नहीं होने देगा। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति को गुरु धारण करने की आवश्यकता है।

हिन्दूओं में ९ १० वर्ष के बालक को गुरू धारण कराया जाता था। मेरठ वाली भाई आई हुई है उसके साथ उसके नवयुवक पुत्र है उनको कहना चाहता हूं कि पहिले ब्रह्म बनो खूब बढ़ो खूब उन्नति करो जब उन्नति करते करते थक जाओगे तो फिर सत नाम की बारी आयेगी इससे पहिले नहीं। जिस प्रकार तुम अभी पूरी नींद लेकर उठे हो और यदि तुम यह चाहो कि तुमको दुबारा तुरंत हीं नीद आजावे तो यह नही आयेगी। इसी प्रकार यह निज नाम या सत नाम भी उसके भाग्य में आता है जिसने पहिले संसार का अनुभव कर लिया हो। संसार हिर्सो हविस में पड़ा हुआ है। इसी वास्ते यह गुरू मत है। मुझे भली प्रकार याद है कि सेठ दुरगादास जोकि मेरे मित्र हैं, मेरे साथ वसरा बगददा रहे हैं, उनके घर वाले उनकी सगाई करना चाहते थे, उन्होंने मुझे बताया मैं चूंकि निवृत्ति मार्ग का था इस लिये मैंने उनसे कहा कि क्यों व्यर्थ विवाह करके झंझट मोल ले रहे हैं।

सेठ दुरगादास जी हुजूर दाता दयाल जी के पास गये और अपनी सगाई के संबन्ध में बताया, उन्होंने आज्ञा देदी। दुरगादास जी ने उनसे कहा क फकीर चन्द तो विवाह करने को मना करते हैं तो वह बहुत हंसे और कहने लगे कि उससे पूछना कि आपने तो दो विवाह कराये हैं और

मुझे डाक भी नहीं करने देते ।

मेरठ वालो । तुम आये हो तुम्हारी पुत्री का विवाह होनाचाहिये समझते हैं, ? जबतक जीवन में अनुभव नहीं होता तबतक मानव को मत नाम की ओर जाने की आवश्यकता नहीं है । कबीर साहव या स्वामीजी महाराजा मन तो दौडेगा ही यदि उसको गुरू मिला हुआ है तोमन ऐसी ओर जायगा जो उसके लिये, उसके कुटंव के लिये और उसके देश के लिये सुखदाई होगा और यदि गुरू नहीं मिला तो वह स्वयं भी खराव होगा घर वालों और सम्बन्धियों को भी खराब करेगा और देश के लिये भी हानि कारक बनेगा ।

मेरे पास बहुत से नव युवक आते हैं यदि मैंउन को निवृति मार्ग कीशिक्षा दूं तो उस समय भावुकता में आकर उनको लालसा तो अवश्य उत्पन्न होगी किन्तु दो चार मास के पश्चात वह गिर जांयगे इस लिये मैं पूर्ण रूप से सतसंग देता है । जीवन के हर अंग पर प्रकाश डालताहूं ताकि जीव अज्ञान में आकर पथस्रष्ठ न होजाय । मेरठ वाली माई के नवयुबक पुत्रों को कहना चाहता हूँ कि तुम लोग किस लिये आये हो १ मैं अपनी डयूटी को पूरा कर जाना चाहता हूं । मैंने कलके सतसंग में माया की व्याख्या की थी ।

तीन ३ - चार ४ - वर्ष हुये तो मैं देहली दसहरा सतसंग पर गया मैंने देहली वालों को कहा कि लंगर का प्रबंध न करना क्यों कि मेरे स्पष्ट वर्णन से कोई मुझे पैसा देता नहीं किन्तु उन्होंने ३०० रू० जमा किये और लग भग ३०० रू० मेरे पास आये इससे लंगर का काम कहां पूरा होता था । इसस्त्री का पति जिसको मैं उस समय जानता नहीं था । वह या अन्य जो बड़े बड़े संत हुये हैं इन सबका निवृति मार्ग रहा है । किन्तु समस्त संसार इसका अधिकारी नहीं है । मैं नहीं मानता । किंतु बिशेष विशेष सुरतें बचपन से ही इस ओर आ जाती हैं । यह उनके पिछले जन्म के कर्म होते हैं । जैसे गुरु नानक साहब के समय में बाबा बुढ्ढा था यह उसके पिछले जन्म के कर्म थे । सबके लिए

एक ही नियम नहीं है। जब संसार में इस ओर से कोई व्यक्ति उकता जाता है तो उसके लिए यह वानी है :—

सुगना बोलते निज नाम।

जो व्यक्ति मन से अशान्त और बे चैन हो जाता है उसके लि। यह सत नाम है। जन साधारण के लिये नहीं है। किन्तु आज कल के गुरू सबको नाम दिये जा रहे हैं। हुजूर दाता दयाल जी ऐसा नहीं कहते थे। वह जीव को देख कर उसके अधिकार के अनुसार संस्कार देते थे। हां ! नाम अवश्य मिलना चाहिए, किंतु कैसा नाम ? उसको जीने का रहस्य बताना चाहिये और इस जीवन में मन को ठीक रखने का उपाय बताना चाहिए। आया और एक लिफाफे में ११००) मुझे दे गया। मैंने देखा और कहा कि क्या तुम प्रसन्नता पूर्वक देते हो ? और चला गया। ५–६ महीने तक मुझे पता न लग सका कि यह व्यक्ति कौन है और क्यों आया है और क्यों रुपये दे गया है। बाद में मुझे पता लगा कि इसके अंतर मेरा रूप प्रकट हुआ था और इसने जाग्रत अवस्था में खुली आंखों से मुझे प्लेटफार्म पर देखा था। बात यह थी कि श्रीमती भंडार देवी मेरठ में सतसंग देने जाया करती हैं। इसने लोगों को मेरा विचार दिया होगा। यह भी कहीं सुन गया होगा।

ऐ भारत वासियो ! मैं इसके अंतर नहीं गया और मैं नहीं था जिसको इसने देखा वह इसके अपने ही मन का नकशा तथा भाव था। यह व्यक्ति भंडार देवी के सतसंग से संस्कार ले गया और वही विचार उसके मन पर बैठ गया। क्या कोई ऐसा महात्मा है जो ऐसे फंसे हुये पंछी को सच्ची बात बता दे ? मैं हूं संत सतगुरु वक्त ! प्रकृति ने इसी लिये मुझे इस चोले भेजा है कि यदि किसी के भाग्य में है तो उसका भ्रम और अज्ञान दूर कर जाऊं। मैं इस फंसे हुये पंछी को मुक्त कर देना चाहता हूं। मैंने हुजूर दाता दयालजी की बहुत सेवा की। किंतु उन्होंने भी मुझे ऐसी स्पष्ट बात नहीं कही थी। उन्होंने भी सैन बैन से

काम लिया। मेरे अंतर भी सन १९०५ में उनका रूप प्रगट हुआ था वह माया थी। और मैंने जीवन में माया का बहुत खेल खेला। समझती है करतार की मां ? मैं तुम लोगों को मुक्त कर जाना चाहता हूं। किन्तु तुम लोग क्या मुक्त होना चाहते हो ? तुम लोग तो मुझे भी अपने पंजे में रखना चाहते हो। मैं किसी के पंजे में नहीं आना चाहता। मेरी अंतिम आयु है। मैं परम संत हूं और सत ज्ञान दाता हूं। किन्तु मेरी बात को समझने वाला अभी संसार कहां है।

मैंने जितना खेल खेला सब माया में खेला। हुजूर दातादयाल जी फरमाया करते थे-फकीर! तुम अभी काल और माया से नहीं निकले तो मैं रोया करता था कि कब निकलूंगा ? फरमाया कि मेरी आज्ञा का पालन करो। तो मुझे दाता दयालजी ने यह आदेश दिया था। अब तुम लोगों के प्रताप से मैं इस माया के चक्र से निकल गया। जो कुछ मैंने आप लोगो से सीखा वह मैं आप लोगों को दिए जा रहा हूं। यह योग जप, तप तीर्थ, व्रत, दान, पुन्न यह सब माया है। भारद्वज जी ! सतसंग सुन रहे हो ?

सुगना बोल ते निज नाम
आवत जात विलम्ब नहिं लागे मंजिल आठों याम।

तुम्हारा मन प्रत्येक समय चलायमान रहता है, कभी साकार और कभी निराकार में चक्कर खाता रहता है। जो व्यक्ति चक्कर खाते खाते थक जाता है उसके लिए यह सत नाम है। जन साधारण के लिए नहीं है। उनके लिए हूं कि पहिले खूब यात्रा करो, बढ़ो किन्तु किसी पूर्ण गुरू के आदेश में रहो, उसके सतसंग से लाभ उठाओ। इस स्त्री के पति ने मेरा रूप देखा और माया के चक्र में आ गया। फंस गया और ११००) दे गया। मुझे खेद रहा कि मैंने उस समय उसके महत्व को नहीं समझा। अब यह लोग पैसा नहीं देंगे क्योंकि अब मैंने इनकी आंखें खोल दी हैं। मैं अज्ञानियों की आंखों मेंधूल डाल कर पैसा नहीं लेना चाहता न अपने लिए और न मन्दिर के लिए, धोखे से लिया हुआ

पैसा मुझे भी खा जायेगा और मन्दिर को खा जायेगा।

ट्रस्ट वालो मैं जानता हूं कि मैं मानवता मन्दिर की उन्नति की जड़ में कुल्हाड़ी चला रहा हूं, किन्तु मुझे मानवता मन्दिर की उन्नति की आवश्यकता नहीं है, मुझे मानव के जीवन की आवश्यकता है। मैं चाहता हूं कि मानव को सच्ची समझ आ जाय। प्रेम प्रसन्नता से जो इच्छा हो दो कोई पाप नहीं है किन्तु धोखे में रखकर लेना महा पाप है। इन धर्मो और पंथों ने ग्रहस्थियों को मूर्ख बनाकर लूटा है। मैं इस संसार में लोगों को लूट से बचाने के लिए आया हूँ। कितने साहस और गौरव के साथ मैं यह बात कह रहा हूँ। जिसका जी चाहे मेरे सतसंग में आये, जिसका जी चाहे न आये। जिसका जी चाहे 'मनुष्य" बनो या मेरी पुस्तक पढ़े या न पढ़े, मैं इस बात की परवाह नहीं करता। मैं सत पुरुष हूं और संसार को इस काल और माया का रूप बताकर उनको इससे निकाल देना चाहता हूं। यहीं सत गुरु का मिशन है। मैं चाहता हूं कि तुम लोगों को लोक और परलोक में सुख मिले :—

सुगना बोलतें निज नाम ॥

आवत जात बिलम्ब नहीं लागे, मंजिल आठों याम।
लाखन कोस पलक में जावे, कहूँ न करे आराम ॥

क्या मैंने गलत कहा है ? मयमन प्रत्येक समय यात्रा में रहता है। इसको कहीं चैन नहीं। किन्तु इस यात्रा के बिना तुम्हारा निर्वाह भी नहीं है। तुमने यात्रा तो करनी ही है। इसलिए अच्छी यात्रा करो, प्रेममय जीवन बनाओ। अच्छे विचार रक्खो, नेकी-भलाई, पर उपकार का जीवन बिताओ। जब तुम थक जाओगे तब नाम की बारी आयेगी। इससे पहिले नही। इसलिए किसी पूर्ण पुरुष के सतसंग में जाया करो :-

हाथ पांव सुख पेट पीठ नहिं, नहीं लाल न सेतन शाम।
पंखन बिना उड़ें निस वासर, सीत लगे नही घाम ॥

क्या उसका कोई रूप है ? तुम अपने मन में सोचो। उसका कोई रूप

नहीं है। उसके पंख नहीं किन्तु यह मन उड़ता रहता है। कभी कहीं और कभी कहीं जाता रहता है, तो इसको काबू में रखना है। इसलिए इतना ही खाओ जितना कि आवश्यक है, उतना ही चलो जितना कि जरूरी हैं, उतना ही काम करो और उतनी ही बात करो जो आवश्यक हो। शरीर को स्थित रखने के लिए खाओ, जीभ के स्वाद के लिए मत खाओ। किसी ध्येय को लेकर काम करो। मैंने मानवता मन्दिर की नींव रक्खी है, मेरा मिशन है, मेरा ध्येय है। मैंने व्यर्थ ही यह आडम्बर नहीं रचा। मैं चाहता हूं मेरा प्रयोजन है कि जीवों का अज्ञान नाश हो और उनको सुख शान्ति मिले। तुम्हारा जीवन सुख से तभी व्यतीत होगा जब तुम किसी ध्येय को लेकर काम करोगे वरन् अनाप शनाप और ऊट पटांग काम करने से हानि होगी और अशान्ति आजायगी।

वेद कहे सरगुन के आगे, निरगुन का विश्राम।
निरगुन सरगुन तजो सुहागिन, जाय पहुँच निज धाम॥

हमारे मन का किसी स्थूल पदार्थ की चाह रखना और उसके पीछे दौड़ना सरगुन पनाहै और कल्पित विचार धारा रखकर उसके पीछे दौड़ना निरगुन है तो जब तक कोई व्यक्ति निरगुन और सरगुन के पीछे दौड़ता रहेगा उसको विश्राम कहां मिलेगा। किन्तु विश्राम से पहिले तुमको इस संसार में धन, मकान और हर प्रकार के जीवन की आवश्यकतायें हैं इनके बिना यहां निर्वाह नहीं। इसलिए करो किंतु इतना करो कि उसमें फंसो नहीं। जब सरगुन और निरगुन दोनों की पूर्ति हो जाती है तब विश्राम की सूझती है। सरगुन और निरगुन के परे पारब्रह्म और शब्द ब्रह्म है अर्थात प्रकाश और नाम है और वही गुरू का रुप है।

लाल गुलाल बाग हंसन में, पंछी करे आराम।
दुख सुख वहां कबहू नहीं व्यापे, दर्शन आठों याम॥

यह अध्यात्म है। आगे प्रकाश का मण्डल आ जाता है जहां सुरत मन के विचारों को छोड़कर ब्रह्ममत और प्रकाश मय हो जाता है। शब्द को सुनना सतमय होना है उसमें जाकर विश्राम मिलता है। मैं उसका आनन्द लेता रहता हूं। किन्तु इसके लिए किसी गुरु का सहारा पकड़ो और उसको अपने जीवन के कष्ट आपत्ति बताओ जिस प्रकार सेठ दुरगादास जी गये थे। मैं तो निवृति मार्ग का अनुयाई था। यदि वह मेरे कहने के अनुसार विवाह न करते तो संभवतः कहां कहां बदनाम होते। इसलिए गुरु पूर्ण होना चाहिए। सबके लिए एक ही नियम नहीं है :—

तूर ही ओढन तूरे डासन, तूरे को सिरहान।
कहें कबीर सुनो भाई साधो, सतगुरु तूर तमाम।

हिंदुओं में ९ वर्ष के बच्चे को इसीलिए गुरु परायन बनाकर उसको यज्ञोपवीत पहनाया जाता था और उसको गायत्री मंत्र अर्थात प्रकाश का साधन बताया जाता था ताकि वह साधन करके और गुरु परायन होकर अपने जीबन को ठीक बनाता रहे और बुढ़ापे में आत्म रुप में चला जाय।

सतसंग दो प्रकार का होता है जैसे एक जनरल हैल्थ डिपार्टमेन्ट होता है और एक हस्पताल होता है जब कोई आदमी बीमार होतो उस समय हैल्थ डिपार्टमेंट काम नहीं करता बलकि वहां हस्पताल काम करता है। इसी प्रकार एक जनरल सतसंग होता है और एक व्यक्तिगत। प्रत्येक व्यक्ति की परस्थितियों को देखकर हमलोग उसको आदेश देते हैं, जैसे मैंने कल बनाया था किहुजर दाता दयाल जीने मुझे नाम दिया, मेरे छोटे भाई साहब को नाम दिया और मेरी स्त्री क नाम दिया नाम तो एक ही था किन्तु अनुपान बिभिन्न थे। इसलिये गुरू जो कहैं सोहित कर मान गुरू जो कहैं सोचित धर ध्यान।

मेरठ वाली माता तुम किस लिये आई हो? मैं इस संसारसे अपनी आत्म को निः स्वार्थ निः छकपट और निष्काम लेजाना चाहता

हूं। यदि कोई सांसारिक दुख है तो अकेली मिलना, जोकुछ मेरी समझ में आयेगा बतादुंगा तुमको जोकुछ भी मिलना है वह तुम्हारी श्रद्धा और विश्वास का फल मिलना है किसीने तुमको फूंक नहीं मारनी है। किन्तु तुम्हारे विचार को ठीक रखने के लिये तुमको आदेश देना है और विचार देना है यहां तक तो मैं मानता हुँ यदि प्रकृति ने मुझे एसा अवसर दिया कि मैं संसार को ठग सकूं तो यह मेरा एक टैस्ट तथा जांच है यदि एक व्यक्ति को घूंस तथा रिशबत का पैसा नहीं मिलता और वह कहे कि मैं ईमान दार हूं तो यह उसकी बड़ाई नहीं। यदि एक व्यक्ति एसे वाता वरण में है कि उसको रिशबत मिल सकती है और वह नहीं लेता तो यह उसकी बहादुरी है।

मैं स्टेशन मास्टर रह चुका हूं बहुत कुछ कमा सकता किन्तु मैंने रिशबत नहीं ली। गुरू पदवी पर आया यदि परदा रखता तो लाखों का मालिक होता। संसार हेरा फेरी करने वालों का आदर मान करता है। देखो ना गुरूओं के नाम के डंके बजाये जाते हैं। ओर झंडे फहराये जाते हैं।

सांची बात कबीरा कहैं सबके मनसे उतरे रहैं। यैह दो बस्तुं कनिक और कामिनि मानव की गिरावट का कारण बनती है। मैंने कनिक और कामिनी दोनो को त्यागा। यह नहीं कि मुझे मान वता मंदिर के लिए पैसे की आवश्यकता नहीं है। यह बात झूंठ है। मैं चाहता हूं कि जो सज्जन मेरे विचारों से सहमत हैं और वह यह समझते हैं कि संसार के लिए मेरी शिक्षा लाभ दायक है तो वह मेरे विचारों के प्रचार के लिए मानवता मंदिर में मेरी सहायता करें क्योंकि बिना पैसे के काम नहीं चलता। किंतु हेर-फेर करके मैं किसी से लेना नहीं चाहता।

नोटः—(१) ग्राहक बन्धु तुरन्त ही अपना वार्षिक मूल्य ४.५० भेजें। (२) प्रेस वालों की टाल मटोल और असावधानी से अंक लेट है क्षमा करें।

कहे एक जब सुनले इन्सान दो ।
कि हक मे जवां एक दी कान दो ।।
तुम एक पान के बदले सौ पान दो ।
गर एक दान लो तो तुम दस दान दो ।।
जो तुम पर निछावर उस पैर सौ जान दो ।
मगर इस सखुन पर भी तुम ध्यान दो ।। कहे एक:-
कोई एक बार जो तेरे आए काम ।
तो सौ बार कर तू उसे शाद काम ।।
मगर यह किसी साफ दिल का कलाम ।
अमल में रहे हर सुबह व शाम ।। कहे एक – – ।।
अगर चाहता है तू ऐ नेक नाम ।
कि तासीर से पुर हो तेरा कलाम ।।
जहां में रहे तू सदा शाद काम ।
तो पेशे नजर रख इसे भी मुदाम ।। कहे एक– – ।।
मिली आदमी को इकहरी जवां ।
कि अफई के होती है दुहरी जवां ।।
इसी वास्ते बन्द हैं उसके कान ।
यही मतलव है इसका ऐ राजदां ।। कहे एक– –।।
बुरी और भली दोनों सुनते रहो ।
कि मजबूर हो जवकि कान दो ।
मगर याद रक्खो कि जब कुछ कहो ।
जबां एक है एक ही वात हो ।। कहे एक––।।
जिसने कि एक बार लिया मुंह से तेरा नाम ।
सौ बार तूने संभाले हजार काम ।।
तन मन से धन से नाथ जो होवे तेरा गुलाम ।
मिलती हैं जीते जी उसे भक्ति व तेरा धाम ।। कहे एक– -

भीम प्रिंटिंग वर्क्स निधीश निकेतन मदारगेट, अलीगढ़ ।

RS.

—:मनुष्य बनो:—

ओ३म् पूर्णमिदः पूर्णात्पूर्ण मदुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्ण मेवावशिष्यते ॥

वर्ष १९	अगस्त सन् ७१ भादों सं० २१२८ वि०	सं० १०/२२५

सतगुरु प्रीति

जो कोई येहि बिधि प्रीति लगावै ॥ टेक ॥
गुरु का नाम ध्यान ना छूटै.परगट ना गोहरावै ॥ टेक
कुरम सुतन को धरतु है ऊंचै, आप उद्र को धावै।
निसु दिन सुरत रहै अंडन पर, पलभर ना बिसरावै ॥ २
जैसे चात्रिक रटे स्वांति को, सरिता निकट न आवै।
दीन दयाल लगन हितकारो, स्वांति जल पहुँचावै ॥ ६
फटि सुगंध कज्ज की जैसे, मधुकर के मन भावै।
है गई साँझि बंधि गे संपुट, ऐसी भक्ति कहावै ॥ ३
जैसे चकोर ससीतन निरखे, तन की सुधि बिसरावै।
ससितन रहत एक टक लागो, तब शीतल रस पावै ॥ ५
ऐसी जुगत करे जो कोई, तब सो भगत कहावै।
कहै कबीर सतगुरु की मूरति, तोहि प्रभू दरस दिखावै ॥ ६

रक्षाबन्धन के उपलक्ष में राखीं भेजने वाले सज्जनों को महाराज जी की शुभ कामनायें और शुभ आर्शीवाद

मैं श्रीनगर कश्मीर था। बहुत से सज्जनों ने मुझे राखियां भेजीं। मेरी आत्मा ने अपने आप से प्रश्न किया ओ फकीर। तूने गुरु बनके यह क्या स्वांग रचाया है ? मित्रो। जीवन किसी उलझन में बीता। प्रण किया था कि अपना अनुभव कह जाऊंगा। जो अनुभव मुझको हुआ उसने मुझको निर्बन्ध बना दिया। मैंने यह गुरुआयी का काम अपने जैसे दीवानों को निर्बन्ध करने के लिये किया किन्तु अनुभव मुझे यह सिद्ध कर रहा है कि संसार के प्राणी निबन्ध नहीं होना चाहते। वह तो बन्धन में आनन्द लेना चाहते हैं। और लुफ यह है कि आप बन्धन में आनन्द लेना चाहते हैं, और मुझे भी बन्धन में फंसाना चाहते हैं। मुझपर तो दाता की दया हो गई। सतसंगीयों के अनुभवों ने मुझे इन बन्धुनों का रूप बता दिया। जिन सज्जनों ने मुझे राखी भेजों हैं उनको व्यवहारिक रूप और प्रेम की दृष्टि से धन्यबाद देता हूँ। गुरू का काम जीवों को निर्बन्ध करना है और वह तब होंगें जब उनको सचाई का ज्ञान होगा। वह कौन है कहां से आये यह बताने के लिए मैं ३३-३४ वर्ष से काम करता हुआ चला आ रहा हूँ। काश। लोग मेरे भाव को मेरे साहित्य से या मेरे सत-संगों से समझ सकते तो वह इस संसार में रहते हुए भी जीवन मुक्ति अवस्था में आ सकते थे। गुरु की रक्षा क्या है ?

गुरु रक्षा जाके संग नाहीं, ताको काल कर्म भरमाहीं।

मैं अपनी आत्मा से प्रश्न करता हूँ कि राखियां बंधवाते हो

और मन्दिर के लिये भी सेवा लेते हो। क्या तुमने अपना काम पूरा कर लिया ? हां ! मेरी आत्मा कहती हैं कि जो एक सतगुरु का सच्चा काम था वह मैंने कर दिया। मनुष्य बनो, शिव, दयाल, और प्रदीप समाचार पत्र आदि द्वारा ज्ञान देता रहता हूँ। जीवों के अपने कर्म हैं भाग्य हैं जो समझते हैं उनका बेड़ा पार होगा।

राधास्वामी धरा नर रूप जगत में, गुरु होय जीव चिताय।
जिन जिन माना बचन समझ के, तिन को सघ लगाय॥

यह लेख राखी भेजने वालों के लिए इस पत्रिका में प्रकाशित होने के लिऐ भेज रहा हूँ। फकीर

स्वतन्त्रता दिवस १५-८-७० को परमदयाल जी के प्रवचन मानवता मन्दिर में

आज सतसंग में कबीर साहब का यह शब्द पढ़ा गया:—

बतादे गुइया कौन वरण मेरो सैंया॥
जा घर का मारग नहि जानू, धरू कौन विधि पइयां।
अपने पिया को चीनत नाहीं, बैठू कौन की छइयां॥
पकड़न गई पकड़ नहि पाई, हो गई भूर भुरइयां।
सग की सहेली इतनी चातुर, कर गई कान भरइयां॥
तीन पनाह धोखे में बीत गये, लागी ठूढ़ दुडनियां।
चित्त पसार के देख ले सजनी, कोई किसी का नइयां॥
कहत कबीर सुनो भई साधो, अब सुधरन की नइयां।

राधा स्वामी। यह कबीर साहब का शब्द है क्या उसका भाव है यह तो वह जानते होगे किन्तु मैं इतना जानता हूं कि मैं किस

वस्तु की खोज करता था। सुरत जो मैं हूं वह किसी वस्तुको ढूढ़ती थी। धन सम्पत्ति को ढूढ़ती थी, संसार के पीछे लगती थी, तो उसका भी अनुभव हो गया। यहाँ कोई अपना नहीं। हम सब अपने अपने स्वार्थ के साथ लगे रहते हैं दूसरे व्यक्ति मेरे साथ अपने स्वार्थ के लिए लगे रहते है। चाहे मित्र हो, भाई हो, सतसंगी हो, गुरू हो, हम गुरू के साथ लगते हैं तो स्वार्थ के लिए ही लगते हैं न। कोई गुरू के साथ गुरू के प्रेम के लिए थोड़ा ही लगते हैं स्वार्थ के लिए ही लगते हैं। चलता रहता हूं। निचले मन की श्रेणी के खेल तो मेरे सारे समाप्त हो गये। आगे जिसको अपना वरण समझता था वह तो छूट गए। अच्छा भी हुआ और बुरा भी हुआ। इस ज्ञान के होने से कि मैं किसी के अंतर नहीं जाता बुरा तो यह हुआ कि पहले इन रूपों और रंगों में बैठ कर सहारा लेता था, एक आस लगी रहती थी, जिस प्रकार तुम लोग आते हो क्या है मेरे पास कुछ हैं या नहीं तुम लोग सहारा ले लेते हो, तुमको सहारा मिल जाता है उस सहारे में तुम प्रसन्नता लेते हो किन्तु जब तुम्हारी इच्छा पूरी नहीं होती या जब तुम्हारा वह ध्येय जिसके लिए तुमने वह सहारा लिया है वह पूरा नहीं होता, तुम्हारा प्रयोजन पूरा नहीं होता तो फिर तुम मुझे भी छोड़ जाते हो। मुझे न छोड़ा अपने गुरू को छोड़ा, गुरू को न छोड़ा। राम को छोड़ा, राम को न छोड़ा परमात्मा को छोड़ा। छोड़ जाते हो कि नहीं।

मानव जब अत्यन्त दुःखी हो जाता है तो कहता है ईश्वर को क्या याद करना हैं। मुझे अपनी स्त्री कीबात याद आती है जब उसे अत्यन्त कष्ट अचेतनता की दशा थी तो गोपाल दास उसके पास बैठा हुआ था कहने लगा माताजी राम राम कहो वह कहने लगी आग लगे तेरे राम को मेरी तो जान निकल रही है।

तात्पर्य यह है कि मेरे निचले सहारे सब टूट गए अब जब मन के सारे सहारे टूट गये तो आगे रह गया प्रकाश या शब्द। उस प्रकाश या शब्द में भी प्रसन्नता और आनन्द है। खोज मेरी तो समाप्त नहीं हुई किसी और की जैसे कि कबीर साहब की दाता दयालजी बाबा साबनसिंह जी की समाप्त हुई हो तो मुझे पता नहीं। मेरी खोज समाप्त नहीं हुई। पुरुषोत्तम दास तुम मेरे वर्षों के मित्र हो, मैं खोजी हूँ, यात्री हूं, चलता रहता हूं कबीर साहब कहते हैं :—

बतादे गुइयां कौन वरण मेरो सैयां

वरण मेरा आदि क्या है मैं कौन हूं कहां से आयां हूँ जिसको कि खोज करता हुआ चला आया। मैं संसार को धोखा देना नहीं चाहता। चार दिन का जीवन है, तुम यदि कहो कि मुझे पता लग गया कि मैं कहां से आया हूँ तो यह झूंठ है। बुद्धि से मैं कह देता हूं कि मैं शब्द के भडार से आया हूँ। प्रकाश से आया हूं यह ठीक है जहां तक कि बुद्धि का सम्बन्ध है और किसी को कोई समझ भी क्या सकता है किन्तु क्रियात्मक रूप से यह मेरी समझ में नहीं आया तो मेरा वरण क्या हैं, जिसको मैं जान नहीं सकता, जिसको मैं देख नहीं सकता, जिसको मैं पहचान नहीं सकता। सम्भवतः इसी वास्ते सन्तों या स्वामी जी ने कहा है कि वह अकह, अपार अगाध अनामी है। वह जो मेरा बरण है, जो असली मैं हूं जो प्रकाश में रहती हुई प्रकाश को देखती है। शब्द में रहती हुई शब्द को सुनती है। मेरी वह वस्तु जो है वह अभी खोज करती है किसको? अपने आदि को। यह मेरी अपनी रहनी है परशोत्तम दास हो सकता है मेरा मस्तिष्क खराब हो गया हो किन्तु मैं अपने अनुभव को कहां ले जाऊं? है मेरे में शक्ति? यदि है तो बताओ। मैं नहीं जानता इस वास्ते यदि मैं कुछ कह सकता हूँ कि मेरा वरण क्या है तो वह है अकह अपार अपार अगाध और आदि और अनामी। कोई उसको

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY PURNADAYAL

अपना आप कह देता है, कोई अपनी जात कह देता है, कोई कहता है कि मैं स्वयम ही हूं। यह शब्द हैं उस अवस्था को व्यक्त करने के लिए। मैं अभ्यास में था कहाँ था ? वह जो मेरा अपना आप है उसके पीछे चलता था। काश प्रकृति मुझे अवसर दे कि जब मैं शरीर छोड़ू तो बता सकू कि मैं कहां जा रहा हूँ। मेरा क्या परिणाम है। इस समय तक जो परिणाम है वह बता रहा हुँ। कबीर साहब का क्या भाव है मुझे पता नहीं :—

बतादे गुइयां कौन बरण मेरो सैंया।
वा घर का मारग नहि जानू, धरू कौन विधि पइयां ।।

जब मैं अपने पिया का जो मेरा वरण है उसका मार्ग नहीं जानता तो चलता हूँ गिर जाता हूं पहले तो वरण हम समझते थे अपने अंतर क्या ? सुमिरन करो भाई। सुमिरन करते थे, गिरते रहते थे, फिर ध्यान करते थे। ध्यान करते हुए गिरते रहते थे। फिर शब्द सुनते थे फिर भी गिरते रहते थे। अब गिरता तो मैं नहीं किन्तु चलता रहता हूं। कहां को चलता रहता हूँ ? कोई कह देता हैं अपने आप में चलता रहता हूं कोई कहता है अपनी जाच में चलता रहता हूं, कोई कहता है मालिक के दरवार में चलता रहता हूँ। ऐसा ही लोग कहते हैं यह वरणन शैली है तो मेरा वरणन क्या है ? जिसकी कोई आकृति नहीं जिसका कोई रूप नहीं, जो शब्द नही, जो प्रकाश नहीं। तो जो नहीं है उसको मैं क्या कहू। संसार के शब्द प्रयोग करने के लिये क्या शब्दप्रयोग करु। यही कहूगा — ना अकह अपार अगाध अनामी या उसको अनाम शब्द कह दूं। या यह कह दूं कि सत्य को असत्य ने ढक रक्खा है। तो मैं यहां तक पहूँचा हू। क्योंकि मेरा व्यक्तित्व मेरा शरीर अभी तक है इस लिये अभी तक ससार में आता रहता हूं। प्रकाश में आता रहता हुँ शब्द में आता रहता हू। मन में आता रहता हू मन शरीर में आता रहता हुँ। तो वरणा क्या है

अकह, अपार, अगाध और अनामी।

यहां तक अनुभव तक यदि में पहुँचा हूं तो कैसे पहुंचा हूं। जिस विधि से आज स्वतन्त्रता दिवस है, जिस नियम से, जिस करम से और जिस खेल मे भारत वर्ष को स्वतन्त्रता मिली। महात्मा गांधी राजनीतिक लाइन के गुरु थे। उन्होंने ३ चीजें बनाई। हड़ताल और असहयोग इनको अपना कर स्वराज्य प्राप्त किया। अध्यात्मिक जगत में भी हड़ताल है, नागरिक अविज्ञा है और असहयोग है अविज्ञा

क्या है कि यह जो मन है इसके कहने पर न चलना। हमारा मन नाना प्रकार की लालसायें और इच्छायें करता है न अपने अंतर में तो यदि [redacted] अपनी अकह, अपार अगाध अनामी अवस्था में जाना चाहता है ती वह क्या करेगा। जब तक नागरिक अविज्ञा नहीं करेगा वह इस स्वतन्त्रता को प्राप्त नही कर सकेगा तो यह है अविज्ञा।

मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार हैं, सो साधू कोई एक॥

यह है अध्यात्म स्वतन्त्रता। नागरिक अविज्ञा किसकी मन की। मन बहुत कुछ सोचता रहता है, कभी मन यह चाहता है और कभी मन वह चाहता है तो जो कुछ यह चाहता है उसकी आज्ञा न मानना, उसके कहे पर न चलना। एक तो उसे अकह अपार अगाध अनामी तक जाने के लिये यह है अविज्ञा

(आज्ञा न मानना) एक है
(असहयोग) मन की आशाओं के साथ
(सहयोग) न करना, उसके साथ मेल न करना मन के साथ मेल न रखना अविज्ञा (असहयोग) है मन के अन्दर
जितने बिचार उठते हैं उनको सत न समझने के लिये यह अविज्ञा

(असहयोग) तो मिला मुझको आप लोगों तथा सतसंगियों से। मैंने यह समझ लिया कि यह विदेशी राज्य है, क्यों कि यह मन हमारा देश नहीं है, यह विदेश है :— यह तो नही तेरा देश देश है बेगाना।

सब संत सब महात्मा, सब धर्म यही कहते हैं न कि यह हमारा, देश नहीं है। तो वह जो अकह, अपार, अनामी की अंश है हमारे अंतर उसके उपर बिदेशी राज का शासन था, मन का शासन था इस मन से निकलने के लिये क्या करना पड़ता है अविज्ञा आज्ञा न पालन और (असहयोग) और हड़ताल। जितनी मेरी सुरत की जो चेतनता है, मेरी सुरत की चेतनता की जितनी धारें हैं मन के अंतर जितने बिचार उठते हैं, मन की और आत्मा की चेतनता को साथ लेकर, तो मन के कार्य व्यवसाय को बद कर देना हड़ताल है। जब हड़ताल होती है तो दुकानें बंद कर देते हैं न। कार्य व्यवसाय बंद कर देते हैं। करते हैं कि नहीं करते। जब हड़ताल होती है, सौदा नही बिकता, दुकानें होती हैं, को कारवार नहीं होता। तो जब तक कोई व्यक्ति अविज्ञा (असहयोग) और हड़ताल नहीं करेगा वह इस बिदेशी राज से बच नहीं सकता। बच सकता है तो मुझे बताओ। तो मैं अविज्ञा करता रहता हुं। मन एक बिचार उठाता है। बिदेशी राज है मैं उसकी परवाह नहीं करता। शरीर में रहता हूं, विवशता है। मेरे अंतर में इस संसार के व्यवहार करने की। व्यवहार करने की क्या विधि है ? यह समझ रखना कि यह विदेशी राज है, या यह समझ रखना कि हम यहां के रहने वाले नहीं हैं. तो इस ढंग से मैं चलता हुआ आ रहा हूँ, तब मुझको अपने वरण का पता लगा कि मेरा वरण क्या है, मैं कौन हूँ ? मैं अकह, अपार, अगाध और अनामी हूं।

मैं ऐसा समझता हूं। तो जो व्यक्ति अध्यात्मक स्वराज प्राप्त करना चाहता है उसको यह तीन वस्तुयें ग्रहण करनी चाहिये। मन के गलत भाव-विचार उठते रहते हैं उनको olioobey करना, मन के कहे पर न चलना ही आज्ञा का न पालन करना है और क्या है, बताओ ? और असह योग करना मन के विचारों के साथ सहयोग न करना और हड़ताल करना।

जब तुम अभ्यास में जाते हो तो तुम्हारे अंतर मन के विचारों की जो दुकानें खुली हुई हैं जब तक तुम इन दुकानों को बंद नहीं करोगे तुमको अध्यात्मिक स्वतंत्रता नहीं मिलेगी। आज स्वतंत्रता दिवस है। आपको अध्यात्मिक स्वतंत्रता बता रहा हूं। अध्यात्मिक स्वतंत्रता कैसे मिलती है ? Dioobedience से। किसकी Dioobedience ? मन जिस ओर तुमको अपनी चाहों और मन की इच्छाओं की ओर घसीटता रहता है, उसको bioobey करो। तब तुम अध्यात्म देश में जाओगे। यह जितने धर्म बने हुए हैं देखो ना। कोई फका रखता है, कोई वृत रखता है महात्मा गान्धी बृत रक्खा करते थे। वह क्यों रखते थे ? यह तो उनको पता होगा। वृत का अर्थ यह है कि मन पर कन्ट्रोल करना। भूक लगती है, उसको मारना। जो भाव उठते हैं उनको मारना। तो जब तक कोई इनको मारता नही है तो जो मेरा वरन है उस तक पहुँच नहीं सकता। यह अध्यात्मिक स्वतंत्रा है।

अब में सोचता हूँ कि यदि तुमको अध्यात्मिक स्वतंत्रता मिल गयी तो तुम क्या हो गये ? यह एक प्रश्न है जो मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ, अपनी रहनी और अपने अनुभव के सहारे पर पूछता हूँ कि तुम वहां पहुच गये। अकह, अपार, अगाध, अनामी का तथा अपने वर्ण का तुमको पता लग गय. तो अब तुमको क्या मिला ? वह जो विदेशी राज्य के कारण हमको दुःख और सुख होते थे वे समाप्त हो गये। अब अपना अब अपना राज्य है तथा अपने को तथा अपना ही राज्य है। अपने अपा

मग्न रहना, अपने आप में आप आनन्दमय रहना, अपने आप में आप प्रसन्न चित्त रहना ही स्वतंत्रता है। जहाँ भारतवासियों ने विदेशी राज्य से छुटकारा पाया, मैंने इस मन से छुटकारा पाया। मन के राज्य से छुटकारा पाने के पश्चात प्राणमय कोष का बन्धन, मनोमय कोष का बन्धन, विज्ञानमय कोष का बन्धन, आनन्दमय कोष का बन्धन सहस दल कमल का बन्धन, त्रिकुटी का बन्धन, महासुन्न का बन्धन, और भँवर गुफा का बन्धन। यह सब बन्धन दुःख का कारण है। जब इनसे स्वतंत्रता मिल जाती है तो फिर बेगाना देश तो रहता नहीं, उसका अपना ही तो वह अपने ही पर अपने जीवन की यात्रा को दुःखों, सुखों, हाय-हाय जो आपत्तियाँ हम सहन करते हैं, इससे हम बच जाते हैं। मैं बचता रहता हूँ, अभिन्न शरीर में हूँ, निकल नहीं सकता किन्तु शरीर मैं रहता हूँ अकह, अपार, अगाध, अनामी, जिसको शास्त्र कहते हैं कि सत को असत ने ठग रक्खा है। तो अध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात क्या होता है, जीवन शान्तमय हो जाता है अशान्ति नहीं रहती। जो कुछ होता है होता रहा मैं मन की परवाह नहीं करता। कोई विचार उठता है, फँसता रहता हूँ। सच्ची बात कहता हूँ। कैसे फँसता ? जैसे भारत वर्ष फँसा हुआ है। पाकिस्तान और चीन के डर से, रुस के डर से, अमरीका के एटमबम के डर से, फँसा हुआ है कि नहीं। अभी डर तो इसको है कि नहीं ? तो यह अपनी सभाँल करता रहता है। अभी डर बनाता रहता है, अर्थात सुरक्षा करता रहता है। अभी डर है। तो जब तक शरीर में हूँ, यद्यपि अध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है किन्तु फिर भी डर लगा रहता है :—

सन्त तब लग भय करें, जब लागी पिंजर साथ ॥

जब तक यह शरीर है, मन है, तब तक भय लगा रहता है। संतों को यहि भय न होता तो कबीर साहब के मुख से यह शहद कैसे निकलता।

मैं जानूं मन मर गया, मर कर हुआ भूत।
भूत हो पीछे लगा, ऐसा मेरा कपूत ॥

तो यद्यपि भारत वर्ष ने स्वतंत्रता प्राप्त करली, स्वतंत्र हो गया किन्तु अभी तक ये विदेशी भूत इसके पीछे लगा हुआ है। और इस भूत अर्थात दूसरे देशों से सावधान होने के लिए अपनी सुरक्षा रखनी पड़ती है। अपनी स्वतंत्रता को स्थित रखने के लिए अपनी आर्थिक, सामाजिक और कला कौशल अवस्था को यदि भारत वर्ष ठीक नहीं रखेगा तो इसको डर रहेगा। इसी प्रकार सुरत जो है यद्यपि वहां पहुँच जाती है। मैं अपना अनुभव कहता हूँ, यद्यपि मैं यहां पहुँच गया, अपने वर्णा का पता लग गया। कि अकह, अपार, अगाध, अनामी मेरी जाति है। किन्तु मैं डरता रहता हूं फिर क्या करता रहता हूं? जिस प्रकार शासन सुरक्षा रखता है; मैं भी अपनी सुरक्षा रखता हूं। मेरी क्या सुरक्षा है? तुम लोगों से सम्बन्धियों से, घर वालों के साथ इस प्रकार बर्ताब करता हैं कि वह मुझ पर हावी न हो जायें। जिस प्रकार गोपाल दास मुझ पर हावी होना चाहता था। किसी विशेष बिचार को लेकर वह कहता था कि आप ऐसे नहीं ऐसे करो। घर के खर्च का काम अमुक व्यक्ति को दे दो। यदि मैं सुरक्षा न रक्खूं तो तुम अपने स्वार्थ के लिए जो कुछ मुझको कहोगे तो मैं तुम्हारे काबू में आ जाऊंगा कि नहीं? इस रास्ते से बचता रहूंगा, सुरक्षा रखता है' अर्थात मैं किसी के साथ मोह में गस्त नहीं होता। किसी के साथ इतना प्रेम नहीं करता कि दूसरा व्यक्ति मुझको अपने काबू में करले। न स्त्री न पुत्र न भाई, न सांसारी, न मित्र तो ये मेरी सुरक्षा है तो ये मेरी सुरक्षा तभी रहेगी जब मैं किसी का आश्रित न रहूंगा! यदि मैं किसी का आश्रित रहूँगा तो यदि श्री मती भन्डारो यहां सत्संग में पाठ न करेगी तो मेरा काम रुक जायगा यदि ये ख्याल रखूंगा तो मैं श्री मती भंडारों का आश्रित हो गया। तुम लोगों को क्रियात्मिक जीवन का पाठ पढ़ा रहा हूं। तो अब

में किसी का आश्रित नहीं। प्यार करता हूं, किन्तु अपने स्वार्थ के लिये नहीं करता। यह है। नुक्ता सम्बन्धियों के साथ प्रेम करो सत्संगियों और मिलने वालों के साथ प्रेम करो किन्तु उनके न आश्रित रहो। जब मैं यहां किसके ऊपर अश्रित रहूंगा ? आश्रित पाना केवल उसका जिसका कि में सहारा पकता हूं वह मेरा वर्ण है अकह अपार अगाध अनामी। और वह जो मालिक की जात है, वह मेरा आसरा है। उस आसरे के बिना तो में रह नहीं सकता आसरे के बिना तो में रह नहीं सकता। आसरा रखता हूं इस मालिक की जात का, उस सच्चे दाता दयाल जी का सच्चे सोंवले शाह का, और सच्चे राम का आसरा रखता हूं। अपने जीवन में संसार के साथ अपने निज स्वार्थ को दृष्टि में न रखकर प्रेम करता हूं। सब के साथ। यह है मेरे जीवन का रहस्य। मैंने प्रसार किया था कि अपना अनभव कह जऊंगा, मैं अब ऐसे जीता हूं। मैं किसी पर आश्रित नहीं और किसी को ठुकराता भी नहीं, किसी के साथ शत्रुता भी नहीं रखता शत्रुता रखोगे तो दूसरा व्यक्ति भी तंग करेगा। यह है जीने का रहस्य जो मैं बताना चहता हूं। केबल एक आसारा उस अकह अपार. अगाध और अनामी का रक्खो। किन्तु यदि तुम वहां तक पहुँचाना चाहते हो तो जैसे मेंने तुमको कहा कि आज्ञा पालन न करो, हड़तालें करो, यह तो संसार की हड़तालें हैं न इनको छोड़ो में स्वतंत्रता दिवस पर उसकी सच्ची स्वतंत्रता का उल्लेख कर रहा हूं। तो मैं अब सुरक्षा रखता हूं, यह मेरी सुरक्षा है एक आसरा रखता हूं, किसका ? मालिक का अपनी जगति का, परम तत्व आधार का, किन्तु उसका आसरा रखता हुआ शेष जो है उनका निरादर नहीं करता। सज्जन, मित्र, मेरी सहायता करते हैं मैं उनका आदर करता हूं परिवार वाले करते हैं उनका आदर करता हूं मान करता रहता हूं किन्तु उनके आश्रित होकर नहीं रहता। उनके सहारे पर निर्भर नहीं हूं निर्भर हूं उस मालिक की ज़ात पर। इस ढंगसे मेरा जीवन सुखसे व्यतीत हो रहा है तो आज के सत्संग का शब्द हैं।

बता दे गुइयां,कौन वर्णर मेरो सांइयां ।

तो दाता दयाल महर्षि जी के शुद्ध स्वरूप ने मुझ पर बड़ी दया की, मुझ को मेरे वर्ण का पता लग गया कि मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? मेरी जात क्या है? मेरी जात है- अकह अपार अगाध अनामी, मैं उस अनामी देश से इस संसार में आया हूं। यहां विदेशी शासन था मन ने मुझ को सौ सौ नाच नचाये तो उस से इस स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिये जो गुरू ने मुझे आज्ञा दी थी कि :—

मन के मते न चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार हैं सौ साधू कोई एक ॥

तो मन पर सवारी करने के लिये जो काम मैंने जीवन प्रयत्न किया वह कर्म भोग वश बर्णन कर चला कि जो कोई अध्यात्मक स्वतंत्रा प्राप्त करना चाहता है उसको यह तीन नियम अपनाने पड़ेंगे। (असह योग) (आज्ञा न पालन करना) और हड़ताल विदेशी राज कौन था? मेरा मन था क्योंकियह मन तो हमारा है नहीं यह तो प्रकृति से बना हुआ है। आग पाणी, मिट्टी, और वायू से बना हुआ है। सूर्य चन्द्रमा और तारागढ़ की किरणो का इस पर प्रभाव है मुझे इससे अपने वरन का पता लगा :—

"जा घर का मारग नहीं जानू, धरू कौन विधि पैंइयाँ।

मैं पहले चलता तो था किन्तु गिरता रहता था। जीवन के बड़े अनुभव के पश्चात मुझे इस ज्ञान का पता लगा। थोड़ा गिरा हूँ? मैं बहुत गिरा हूँ। विदेशी राज्य में आनन्द भी होता है अँग्रेजी के राज्य में कितने ही व्यक्ति सुखी भी थे। आनन्द भी है और बे आनन्दी भी है। बे आनन्दी के साथ आनन्द है। चिंता के साथ अचिंता है। धूप के साथ छाया है। यह त्रिगुन आत्मिक जगत है यहां ऐसा होता ही रहता है :—

रात को सोने गये, दम में सवेरा हो गया।
धूप थी साये में आये, फिर अँधेरा हो गया ॥

अपने पिया को चींनत नाँही, बैठूँ कौन की छँइया।

अहा कबीर साहब कहते हैं मैं अपने प्रीतम को जानता नहीं हूँ मैं किस की छांह में रहूँ। अब मुझे पता लग गया कि मेरा प्रीतम कौन हैं मेरा प्रीतम है अकह, अपार, अगाध, अनामी। उसकी शरण और उसकी छांह में रहने का प्रयास करता हूं गिरता रहता हूँ क्योंकि अभी तक मैं विदेशी राज में हूं मेरी सीमा जो है अर्थात मेरी सुरत के चारों ओर जो मन चित्त बुद्धि अंहकार है यह मेरी सीमा की लाइन है। में इनके साथ सोच सभझकर चलता हूं। जैसे मैंने कहा है कि मैं सुरक्षा रखता हूँ। इनके साथ बिगाड़ता नहीं हूँ। इसके साथ मित्रता रखता हूँ। कि यह मुझे बेअर्थ तंग न करें जैसे शासन रखता है प्रभव करता है कि दूसरे देशों के साथ अनबन न की जाय इसलिये अध्यात्म स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात भी मन के विचारों के साथ शत्रुता नहीं रखता बल्कि मित्रता और प्रेम रखता हूँ। किन्तु आश्रित रहता हूँ उस उस मालिक की छांह का। यही कबीर साहब कहते हैं :—

अपने पिया को चोंनत नाहीं बैठू कौन को छइयां।
मुझे तो उसका पता लग गया कि मैं किस की छांह में रहूँ।

इस अकत्ल पुरुष की छांह, उस सर्धाधार की छांह में रहूँ जो मालिके कुल, कूटस्थ, समस्त संसार का मालिक है आधार है, उसकी छांह में रहता हूँ :—

पकड़न गई पकड़ नहीं पाई हो गई भूर भुरइयां।

जीव उसको पकड़ना चाहता है किन्तु पकड़ नहीं पाता। उसको पकड़ेगा कैसे वह तो पकड़ में आ नहीं सकता। उसको पकड़ने का एक यह ही रहस्य कि आज्ञा पालन करना असहयोग करना और हड़ताल करके एक बार अपने घर का पता लगा लो जब तुमको पता लग जावेगा कि तुम तो भई यहां के रहने वाले नहीं हो तुम तो अकाल पुरुष के अंश हो, मालिके कुल के अंश हो, सत्त पुरुष के अंश। जब तुमको

RADHASWAMY DAYAL KI DAYA RADHASWAMY SAHAY
PURNADAYAL

यह ज्ञान हो जावेगा फिर जब तक यह शरीर है इसमें रहते हुये यह जो विदेशी शासन है मन का इसके साथ शत्रुया मत रक्खो। प्रेम के साथ रहो। किन्तु आश्रित रहो उसके तब तुम्हरा जीवन शान्तिमय, सुखमय और आनन्दमय व्यतीत होगा। यह तो जो कुछ मैंने अनुभव कीया। यह तो इस शरीर में रहते हुये कीया है न इसके पश्चात क्या होगा यह अनुमान है, थ्योरी है मेरे पास इसका कोई प्रमाण नहीं है। तभी मैं इच्छा किया करता हूं कि मालिक मुझको सामर्थ्य दे कि जब मैं शरीर से बाहर जाऊ तो बता सकूं कि मेरे साथ क्या बीती। इस समय तो जो कुछ बीता इस शरीर में रहते हुये जो कुछ अनुभव कीया उसका वर्णन कीया है :—

संग की सहेली कितनी चातुर कर गई कान भरइय्या।

सुरत कहती है कि मैं वहां जाना चाहती थी किन्तु मेरे साथ की सहेलियां कौन थी सहेलियां ? मन, बुद्धि, और अहंकार यह इतनी चतुर थी कि अपना काम करती रहीं, अपना स्वार्थ निकाल कर ले गई। मेरी परवाह नहीं की। हमारे मन चित्त बुद्धि अहंकार क्या करते हैं ? अपना ही उल्लू सीधा करते हैं न। हमारे ऊपर कौन दया करता है ? काम इन्द्रीय हम पर दया करती है या ज्ञानइन्द्रिय हम पर दया करती है। या लोभ मोह इन्द्रिय हम पर दया करती है। यह तो सब अपना अपना काम करती हैं यह हमारी सहायक नहीं है। यह बड़ी बुद्धिमान हैं अपने ही स्वार्थ के लिये सब काम करती हैं :—

तीन पनाह धन्धे में बीत गये, लागी ढूढ़ ढुंडनियां।

कहते है कि तीन पनाह बाल्यवस्था, युवास्था और वृद्धावस्था बीत गये अब वृद्ध हो गया तो ढूढ़ने लगा कि जीवन में जितने पाप किये हुये में वृद्ध हो जाने के पश्चात मानव को विचार आता है कि मैंने जीवन में कुछ नहीं किया और अब चलना है। हमको तो खेद है नही हमने तो अपना जन्म बना लिया क्योंकि हमारी समझ में बात आ गई :—

चित्त पसार के देख ले सजनी, कोई किसी का नइया।

कोई है किसी का ? कर्मेन्द्रियाँ अपने भोगो में स्वाद लेती हैं, तो मन अपने भोगो में स्वाद लेता है। मेरा किसी ने क्या किया ? यह तो अपने अपने स्वाद के लिये मेरे साथ खेल खिलाती रहीं। शक्ति यह मेरी लेती रही और काम अपना करती रही। कोई किसी का नहीं। एक तो संसार में कोई किसी का नहीं है न। ससार की बात छोड़ गया अब मैं ऊँचा चला गया यह मन की जो मेरी कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानेन्द्रियाँ हैं न उन्होंने मेरे लिये काम नहीं किया उन्होंने तो अपने ही लिये किया। और शास्त्र भी यह ही कहते हैं अपने-अपने के स्वाद लिये शक्ति मेरी लेती रही और काम करती रही। यह बड़ी चालाक निकली शक्ति मेरी आत्मा की उसको लेकर यह अपना उल्लू सीधा करती रही और मुझको मूर्ख बनाती रही :—

तीन पनाह धोखे में बीत गये, लागी दूड ढुडनियाँ।
चित्त पसार के देख ले सजनी, कोई किसी का नइयाँ॥
कहत कबीर सुनो भाई साधो, अब सुधरन की नइयाँ।

युवा अवस्था बीत गई, वृद्धा अवस्था आ गई अब कैसे सुधरोगे ? इस वास्ते मुझे बाल पन में गुरु मिले थे :—

बालपने में सतगुरु पाये

अल्पायु में मैं तो सुधर गया, प्रसन्न हूँ आज आपको स्वतंत्रता दिवस का सतसग करा दिया। इस संसार के स्वतंत्रता दिवस के आधार पर मैंने आध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने की विधि बता दी। फिर आप लोगों ने सज्जनो क्या करना है :—

मन के मत ना चालिये, मन के मते अनेक।
जो मन पर असवार हैं, सो साधू कोई एक॥

यह संसार का चक्र है कोई भाग्य शाली होता है जिसको यह विचार कि मुझे यहाँ से चले जाना है। स्वामी जी का कथन है :—

तुमने जगत को सत् कर पकड़ा, कैसे पाओ नाम निशान।

देखो यह स्वामी जी की वाणी है करोणों प्राणी इस राधास्वामी में या कबीर मत में या अपने अपने धर्म सम्मलित हुए हैं। और नाम नाम संसार चिल्लाता है संसार। नाम की तो उसको प्राप्ति होगी जिसको यह निश्चय हो जावेगा कि यह जगत सत् नहीं हैं जब तक यह निश्चय नहीं है कि तुम नाम को कैसे पाओगे। एक ही शब्द है स्वामी जी का यदि इस पर राधास्वामी मत वाले या दूसरे सोचें तो उनकी आंखे खुल जावें :—

तुमने जगत को सत्त कर पकड़ा, कैसे पाओ नाम निशान।

मैंने इस जगत को सत्त करके पकड़ा हुआ था। बाहर के संसार को नहीं जो जगत मेरे अंतर था मेरे मन का मैंने उसको सत्त करके पवड़ा हुआ था इस जगत को असत्त सिद्ध किया मुझको तुम सतसंगियों ने कि मैं तुम्हारे अंतर जाता हूं, किसी को पुत्र दे जाता हूँ किसी को ओषधियां बता जाता हूँ किसी की सुरत चढ़ा देताहूँ, किसी को प्रकाश में दर्शन दे जाता हूँ, और किसी के पचें हल कर देता हूँ और नहीं होता। तब से मुझे यह निश्चय हो गया कि मेरे मन के अंतर भी जो रचना होती थी यह सत्त नहीं थी। प्रत्येक व्यक्ति अपने ही विचार से दुखी रहता है और अपने ही विचार से सुखी रहता है।

तो दुःख और सुख जो उसका जगत है। यह उसका अपना विचार ही तो है। वह जगत में फँसा हुआ है तभी तो कहते हैं कि :—

संत को हर्ष शोक व्यापे नहीं।

हर्ष शोक तो तुमको तभी नहीं व्यापेंगा जब तुमको यह निश्चय हो जावेगा कि यह जो मन है इसमें तो विचार उठते हैं। यह है नहीं वरने तुम जगत को असत्य कैसे समझ सकते हो। यह है अध्यात्मिक स्वतंत्रता जिसको आज स्वतंत्रता दिगस पर मैंने अपने निज अनुभव के आधार पर उद्देश दिया। अध्यात्मिक स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात भी स्वरक्षा

रखनी पड़ती है:—

संत तब लग भय करे, जब लग पिंजर साथ।

तो वह क्या है इसको समझते हुये संसार में रहते हुये सबसे प्रेम रक्खो सज्जन से मित्र से किन्तु आश्रित रहो उसके मगर अहंकार न करो। यह तुम्हारे सहायक हैं इनका आदर मान करो। माता पिता का आदर करो। भाईयों और मित्रों का मान करो और प्रेम से रहो तब तुम इस स्वतंत्रता को प्राप्त कर सकोगे। जिस प्रकार हमारा देश दूसरे देशो के साथ बिगाड़ खाता कर लेगा तो इसकी स्वतंत्रता संकट में पड़ जायेगी। इसी प्रकार यदि किसी ने अध्यात्मिक जगत में स्वतंत्रता प्राप्त कर भी ली तो जो उसका व्यवहार संसार में है यदि वह कड़ुवा हैं भाषा ठीक नहीं है द्वेषईर्ष्या मत्म धृणा उसके अन्तर से नहीं जाता, दूसरों कोबुरा भला कहता है तो उसकी स्वतं ता को भय है। इमी वास्ते उसको प्राप्त करने के पश्चात भी मानव को संयम में रहना पड़ता है। बहुत कुछ मैंने कह दिया। सबको राधास्वामी।

ग़ज़ल। पीरेमुग़ांसाहब ॥

मैं हूं सबका सब मिरे हैं, किससे फिर अनबन करूं।
क्या पड़ी है वस्ती को, वीराना और मैं बन करूं॥
साफ सीना साफ दिल हूं, क्यों हसद और बुग्ज के।
मुर्दे अपने दिल में गाड़ू, और इसे मदफून करूं।
आईने की तरह दिल है, बाल क्यों आने लगा।
वह है रौशन क्यों जिला देकर, उसे रौशन करू॥
नूरे बहदत दिल में चमका, और नूरानी बना।
यह तमन्ना थी कि उसको, नूर का मर वजून करू।
जिसने वख्शा इल्म यह, मुझको किया अहसा वड़ा।
सिदके उससे नाम पर सब, जानो दिल और तन करू॥

तेरी सोहबत से भी मैंने, फंज़ क्या हासिल किया।
हैं निछावर मालोधन, और अपना पन करू ॥
क्या कहूं पीरेमुगाँ, तेरा बड़ा अहसान है।
सिदके तेरे नाम पर, सब जान दिल तन मन करू ॥

जो प्रेमी भक्तजन जड़ मूर्ति को ही सब कुछ मान कर सदैव उसके ही पीछे पड़े रहते हैं और उसी का ध्यान करते रहते हैं उन में जड़ता आ जाती है। इसलिये महाराजजी की निरंतर कहते रहते हैं कि मैं किसी को अपने पीछे नहीं लगाना चाहता। वह मूर्ख अपने वास्तविक कर्तव्य से पतित होकर कभी 'तत्वदर्शी' नहीं बन सकते।

संत पथ मैं आयकर, चल तू प्रीत की राह।
प्रेम की दृढ़ता मन रहे, सतगुरु हाथ निवाह ॥
संत पंथ में आयकर, उतनी ही कर तू चाह।
जाते जीवन हो सुखी, सहज ही हो निर्बाह ॥
सहज सहज में काम कर, काम बिना क्या होय।
काम ही ते आराम है, घुरपद पहुचे सोय ॥
बैठा बैठा क्या करे, चल तू अपनी बाट।
पहुँचेगा निज धाम में, अगर लगो है चाट ॥
चसका लगना सुगम है, अगर गुरू मिल जाय।
फिर तो तारे ही बने, और न कोई उपाय ॥
गुरू मिले सब कुछ मिला, करलो इसकी जांच।
संतो इस मार्ग में, छोड़ो झूठ और सांच ॥

मुक्त संसार मैं कहने का मुझको भी अधिकार रहे।

अब स्वाधीन हुआ युग युग की
जटिल दासता से यह जग है,
अब जनता द्वारा आरोपित
पौधा गया भूमि लग है।

अब आंखों को मिली रौशनी
अब कानों ने कुंडल पाया,
मुख को मिला मुक्त स्वर का सुख
स्वभिमान ने शीश उठाया ।।

हम गये थे लखनऊ, चैक अप कराने के लिये।
तन्दुरस्ती गिर गई थीं, उसको बनाने के लिये ।।
काम करना जिन्दगी है, हम करेंगे मौज से।
कौन फिर आयेगा, यहां पर दुख उठाने के लिये ।।
आये मुसाफिराना, महिमान हैं जहां हम।
जाना है जायेंगे, हम दिल दे किसे यहां हम ।।
दिल दे दिया उसी को, जिसकी कि चीज थी।
खुद देखते हैं मित्रो, वो कितनी अजीज थी ।।
वह है हमारा प्यारा, हम हो गये हैं उसके।
उसकी नजर है हम पर, हम पर करम हैं उसके ।।
यही है शर्फे इंसानी, कि इंसां बामुरव्वत हो।
सखी हो रहमदिल हो, खुश चलन हो नेकसरित हो ।।
न होवे मुनहरिफ हरगिज, तरीके रास्तबाजी से।
कोई दरपेश मुश्किल हो, कोई खौफो अजीमत हो ।।
हमेशा याद उस महबूब की, दिल में रहे कायमा।
मुनव्वर कल्ब हो जिससे, अयां राजे हकीकत हो ।।
यही मजहब यही मिल्लत, यही है दीन और इमां।
मुयस्सर हर कसो-नाकस, को जिससे एन राहत हो ।।

मैंने सीखा है, जमाने से मुहब्बत करना।
तेरा पैगामे मुहब्बत, मेरे काम आया है ।।
क्या जादू है, मुहब्बत के चार लफ्जों में।
इसीलिय मुझे, विश्व प्रेमी बनाया है ।।

मर्द मैदां दिक्कतों की, गोद ही का है पला।
साधू और संत को, आराम की कब सूझी भला ॥
शायरों को रात दिन दर्दों, अलम से काम है।
यह सबब है इसलिये, दुनियाँ में उनका नाम है ॥
मरे मिटते हैं औरों के लिये, यह लोग दुनियां में।
सभी को अपना जैसा, यह समझते हैं दुनियां में ॥

सत्संग प्रवचन

[अलीगढ़ सन-१९७१ शिव रात्रि के बाद]

साईं आगे साँय हो, साई सांच सोहाय।
भावे लम्बे केसकर, भावे घोट मुँड़ाय ॥
साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय सांच है, ताके हृदय आप ॥
साँचे कोई न पतीजई, झूठे जग पति आय।
गली गली गोरस फिरे, मदिरा बैठ बिकाय॥
सांच कहूं तो मार ही, यह तुर कानी खोर।
बात कहूँ परलोक की, कर गह पकड़े चोर॥
झूटे को झूटा मिले, अधिका बढ़े स्नेह।
झूटे को सांचा मिले, तब ही टूटे नेह ॥
कबीर लज्जा लोक की, बोले नाहीं साँच।
जान बूझ कंचन तजे, क्यों पकड़े तू काँच॥
साधू ऐसा चाहिए, सभी कहे बनाय।
कै टूटे के फिर जुड़े, बिन कटे भ्रमन जाय॥
सांचे शापन लागई, सांचे कीलन खाय।
सांचे को साँचा मिले, सांचे माहि समाय॥
जाकी सांची सुरत है, ताका सांचा खेल।

आठ पहर चसोंठ घड़ी, साई सो है मेल ।।
साँच बिना सुमरिन नहीं, भय बिन भक्ति न होय ।
पारस में पर्दा रहे, कंचन केहि बिधि होय ।।
अब तो हम कंचन भये, तब हम होते काँच ।
सतगुरु कृपा की भई, मन में उपजा साँच ।।
प्रेम प्रीति का चोलना, पहिन कबीरा नाम ।
तन मन तापर वारि हों, जो कोई बोले साँच ।।
जो तू सांचा बानिया, साँची हाट लगाय ।
अन्दर झाड़ू देयकर, कूड़ा दूर बहाय ।।
तेरे अन्दर सांच जो, बाहर कुछ जनाव ।
जानन हारा जानई, अन्तर जन का भाव।।
लेना देना सहज है, जो दिल सांचा होय ।
साई के दरवार में, पल्ला पकड़े न कोय ।।

में शिव रात्री पर हर साल दयाल नगर में आया करता हूँ और अलीगढ़ भी ठहरता हूं आप लोग भी आ जाते हैं । कई आदमी सम्प्रदायों और पंथों वाले जो कुछ मैंने ३०-३५ वर्ष में कहा या देखा, सामने तो मेरे कोई आता नहीं अगर पीछे डेरे वालों भी कहते हैं कि बाबा फकीर के सतसंग में मत जाया करो । इनकी पुस्तकें न पढ़ा करो । मैंने सत का चोला किया है अगर सच्ची बात को सुनने को कोई तैयार नहीं । इस शब्द में एक कड़ी है :—

सांचे कोई न पतीजई, झूठे जग पति आय ।
गली गली गोरस फिरें, मदिरा बैठ बिकाय ।।

कहते हैं सच्ची बात को कोई सुनता नहीं झूठे पर विश्वास और प्रेम करते हैं जैसे दूध तो गली गली बिकता फिरता हैं मगर शराब दुकान पर बिकती है । जहाँ झूठ और धोखा है वहां लाखों इकट्ठे होते हैं । मैं सच्चा सौदा बेचता हूं और जैसे गूजरी दूध को लेकर गली गली

फिरनी है मैं भी फिरता हूँ कितने हैं जो मेरी बात सुनने आते हैं। जो थोड़े बहुत आते हैं वह दुनियां आदि की इच्छाओं को लेकर आते हैं जैसे मुकदमा, शादी, गरीबी नौकरी आदि अगर में मजबूर हूं। क्यों ? क्यों कि जब राम को वैराग बचपन में दुनियाँ से हुआ, दुनियां से जी उदास राजा दशरथ वशिष्ट के पास ले गये। उन्होंने राम के भाव को बदल दिया। वशिष्ट योग का आधा भाग राम के वैराग के कारणों से भरा है और आधा ज्ञान भरा है। वशिष्ट ने कहा था कि तुम वृह्म के अवतार हो। संसार के निशाचरों का हि संहार करने आये हो। राम ने कहा कि मुझे तो पता नहीं। आप ही ऐसा कहते हैं।

सन् १६०५ ई. में जब मैं एक दृश्य द्वारा हमूर दाता दयाल महर्षि शिव वृत लाल जी महाराज के चरण कंवल मैं गया था तो उन्होंने बड़ी दया करके इस पतित अज्ञानी को छाती से लगाया।

मेरे उस भाव कीपूर्ति करने के लिये मुझे शरण दी, नाम दान दिया और उस मालिक के असली रूप बताने को अन्तर मुखी होने को कहा मेरे नाम बाणियां लिखी। मुझे इस सार भेद या सच्चाई का सन्न सन् १६१६ ई. में हो गया था उस ज्ञान की खुशी में आर्ती सन् १६२१ में करने गया था। उस समय मुझ पर ३ ड्यूटी लगाई (१) निबल, अबल और अज्ञानियों की सहायता।

तू तो आया नर देही में, धर फकीर का भेषा।
दुखी जीव को गले लगाकर, लेना गुरू के देशा।।
तीन ताय से जीव दुखी है, निबल अवल अज्ञानी।
तेरा काम दया का भाई, नाम दान दे दानी।।

(२) तेरा रूप है अदभुत अकरज, तेरी उत्तम देही।
जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल सनेही।।

(३) तू इराक से अब के आया, सत संगत के कारण।
ले प्रसादमय सतसंगत का, होजा भवनिधि तारन।।

जैसे वशिष्ट ने राम को कहा था कि तुम बृम्ह के अवतार हो, वैसे ही दाता दयाल ने कहा था कि तू इस काम को आया है।

कबीर ने इस बाणी में कहा है कि सत्त क्या है।

इस समय जितने धर्म, पंथ, तथा मत इस दुनियां में हैं इनके अनुसार सच यह है कि कोई शक्ति आकर मनुष्य भी सहायता करती है भगर में अपना अनुभव वर्णन करना चाहता हूं ताकि निबल, अबल और अज्ञानी जो दुखी हैं उनको सचाई बता जाऊ। एक सच्ची घटना बताता हूँ। आज सुबह देवीचरन के मकान पर एक लड़का १६ वर्ष का मेरे पास आया। कहा कि बाबा जी आपने मुझ पर बड़ी कृपा की। मैं दुखी था मैंने अज्ञान से बिजली को हाथ लगा दिया। उस समय आप आये और मुझे बचा लिया फिर कहा कि रात को स्वप्न देख रहा था किसी मुसीबत में फंस गया। आप प्रगट हुये और मुझे बचाया। उसने एक बात और कही जहां मैंने उसकी सहायता की।

ए भारत के सम्प्रदाय वालो। कुष्ट पड़े जो मैं झूठ बोलता हूं मैं इस लड़के को जानता भी नहीं। मैं हूं संत सतगुरू। सतगुरू कहते हैं सच्चे ज्ञान को। मैंने उससे कहा कि तू सच बता कि तूने अपने हाथ ही ब्रहमचर्य खोया है उसने कहा हां। उसने मान लिया। पिछले वर्ष से मैंने सम्हाला है। अब मेरा जो ज्ञान था बह सही निकबा

अब मैंने इस अधार पर बताया कि मनुष्य के अन्दर उसकी जो जो आत्मा हैं पवित्र है निर्मल अगर जब यह मन और देह में आ जाता है और देह ओर मन के गलत विचारों से दुखी होता है तब उसको छुटकारा दिलाने का उसके अपने अन्तर का आत्मा सहायता करने वाले का रूप धरकर उसको सहायता देता है। बात तो है इतनी। इस प्रकार दृस्य जो दुनियां देखती है वह निबल अबल और अज्ञानी होते हैं। उनके इस अज्ञान का अनुचित लाभ धर्म पंथों के आचार्य लोग उठाते हैं और नके धन दौलत को लूटते हैं। उनसे नाक रिगड़वाते हैं।

जो हुजूर सरकार कहलवाकर निबल गरीबों के साथ व्यवहार करते हैं यह है सचाई जिसका कबीर ने डंका बजाया है।

जाके आगे सांच है, साई सांच सहाय।
भावे लम्बे केस कर, भावे घोंट मुड़ाय॥

यदि मैं साहस करके यह कह दूं कि जितने भी पंथ वाले आचार्य हैं इस बात को पर्दे में रखकर अपने मंदिर, डेरे धाम, मस्जिद आदि बनवाते हैं और इस भेद को स्पष्ट नहीं बताते क्या वह कबीर के अनुसार सुहा सकते हैं। नहीं मुझे पता नहीं। उनके बाबत कहना चाहता हूँ।

भारत के धार्मिक व पथिकजगत वालो: मैं अनामी धाम से आया अवतार हूँ। गुरू ने मेरा नाम परम दयाल रक्खा है। मैं जानता हूँ कि मेरी सचाई को सुनने वाली दुनियां है मगर मैं बहैसियत सतगुरु ८४ वर्ष की आयु में घर घर कुत्ता बनकर बुढ़ापे में दौरे पर रहकर अपना संदेश देता हूँ कबीर का शब्द है :—

सांचे कोई न पतिजई, झूठे जग पतिआय।
गली गली गोरस फिरे, मदिरा बैठ बिकाय॥

जब तक कोई सच्चा नहीं बनता, वह मालिक को सुहाता नहीं है। पता नहीं कि मालिक को सुहाता है या नहीं। मैंने सत का चोला लिया है। यह काम करने को विवश हो गया हूं। जैसे राम को राजगद्दी मिलती थी मगर मिला वनवास। हालात बदल गये जब राम को राजगद्दी होने लगी, देवताओं में खलबली पड़गई। यदि राम को राजगद्दी मिली तो रावण को कौन मारेगा। देवताओं ने कान्फ्रेंस की। वहाँ से योग माया अयोध्या में आई। नीच बुद्धिवाली मंथरा के दिमाग को फेरा और उससे नीच करम कराया और केकई के द्वारा राम को बनवास दिया गया।

देवता दिव्य शक्तियां है। रावण के जो अत्याचार थे वह ब्रह्माण्ड में मौजूद थे उस समय जीव रावण के कुकर्मों से दुखी थे उन विचारों मे

साइंस के नियम के अनुसार मथरा और केकई पर प्रभाव किया इसी तरह इस पार्थिक जगत में तरह इस के विचार दिमाग में थे कि कोई रामा, कृष्ण, देवी देवता मदद करता है भिन्न भिन्न सम्प्रदायो मे ऐसे विचारो ने मानव जाति को बाँट दिया । लोग पक्षपाती हो गये । आपस में गैरियत न आ गई । परिणाम इसका यह हुआ कि आपस में झगडे होते रहते हैं । यहूदी और ईसाइयों के झगड़े, शंकरा चार्य और बोद्धों के झगड़े अष्टमी आदि आदि जिससे अशान्ति पैदा होती हैं

उन विचारों ने एक महान पवित्र आत्मा (महर्षि शिव व्रतलाल) ने इस अज्ञान के अंधेरे को दूर करने को मुझे टूल (साधन) बनाया कि ऐ मानव जाति तू भूल में है कि कोई हजरत अली, महावीर, देवी देवता या गुरू बाहर से आकर तेरी मदद करता है ताकि मानव जाति का जो धार्मिक पक्षपात है द्वेष है, भेद भाव है, जि के कारण अशान्ति और झगड़े हैं । तलवारें चलती हैं यह दूर हो जाय । जैसे मथरा का दिमाग विशेष काम को योग माया ने बदल दिया था । दाता दयाल के द्वारा मेरे दिमाग को बदला । उन्होंने शरण दी और यह आज्ञा दी । मेरे काम की कदर करने वाले नहीं हैं । यह मालुम है कि कोन है जैसे राम के दरबार में धोबी था जिसने राम के काम को कन्डेम किया था ऐसे रेमे लोग काम की कदर न करने वाले हैं मगर मैं हूं सेवक ,

सुख दुख का भय काटकर. जीव का करें सुधारा ।
जमसे दे छुटकारा ॥

अलीगढ़ वालों तुम मुझे बुला हो मैं अपनी ड्यूटी पूरी किये जाता हूँ वे कदरों की दोस्ती क्यों ?

मांस मांस तेरा चुनलिया. चिड़िया उड़ गये पंख ।

पंथवालो ने मुझे कत्ल करने की भी साजिस की । मैं जो कुछ कह रहा हूँ । सत्य कह रहा हूं । मेरी इच्छा है कि दयाल नगर में जो कुछ दो सतसंग देकर आया हूं देवी चरन या मुन्शीलाल इन्हें प्रकाशित करें ।

एक तो मैं अपने कर्तव्य से मुबुक दोष हो जाऊ और अगर कह बता जाऊं कि सच्चाई क्या है जिस पर कबीर ने इतनी बानियां लिख दी है ।

कबीर के अनुसार यदि कोई तप है तो सत है झूठ के बराबर पाप नहीं । जो पीर या गुरू इस सच्चाई को प्रगट ही नहीं करते, पर्दे में अलग अलग सम्प्रदाय, पंथ अपने धन मान को बनाते हैं यदि कबीर की वाणी को सच मानू कि उनके हृदय में अल्लाह या स्वस्वरूप (जात) कहता था मगर इतनी सच्चाई को सुनने को दुनियां की बुद्धि विश्वास नही करती । बिबश दूसरों की दिमागी दशा को देखकर, क्योंकि समझ नहीं सकते, फकीरों को झूठ भी बोलना पड़ता है । यदि सच कह दें तो उनका दिमाग सच ग्रहण करने के योग नहीं ।

मैं अपना एक उदाहरण देता हूं । मिलाई में मेरे पोती हुई । लड़का अपनी स्त्री को अस्पताल में कर आया । दूसरे दिन पोती हुई पोती दूसरे दिन लड़के के साथ अस्पताल गई । बच्चे कोदे खा तो वह कहती हैं कि ममी: ममी: यह कहां से आई । उसने कहा कि इसे बाबा ने होशियार पुर से पार्सल करके भेजा है लड़की की संतुष्टि को यह ठीक था । इसलिये यह झूठ नहीं । जो महात्मा हिन्दू हो या मुसलमान जिसे की दिमागी कैफियत को देखकर झूठ भी कहते हैं अगर इससे सहारा मिलता है वह झूठ नहीं हैं झूठ वह तब होगा । जब झुठ से अनुचित लाभ उठाता हैं

जैसे कोई आदमी मेरे पास आता है वह किसी कष्ट में है मेरी आदत है किसी को निराश नहीं करता । अब मैंने कोई बात उससे कह दी । वह पूरी हो गई । वह समझता है कि बाबा के आशीर्बाद से हुआ मैं यदि इस तरह का प्रोपोगंडा करा उसने मान लेता हूं लाभ उठाता हूं तो मैं अपराधी हूं मैं उन महापुरषों को जिन्होने हौसला दिया सन्तुष्टि दी चाहे झूठ कह कर ही मैं उसको झूठ कहने को तैयार नहीं अपनी करामात को पबलिक में प्रगट करके अनुचित फायदा नहीं उठाते हैं

मैं यदि अपनी करामात को छापने की इजाजत देता तो एक बड़ी भारी किताब बन जाती।

कादरी साहब! मुझको यह ज्ञान, गुप्त भेद

मतसंगियों से मिला है इसलिये इस आयु में कारण तो मालूम न था। दयाल मगर कादरी साहब, कृष्ण और जो लोग यह कहते हैं कि हमारी सुरत चढ़ाई, नदी में डूबने से बचाया आदि मैं उनको सच्चा सतगुरु मानता हूं। इसके कारण मुझे ज्ञान हुआ है जो मुझको सन १९१९ में हुआ था। यह है सच्चाई। मैं चूंकि सत्य प्रिय हूं।

जाके हिरदे सांच हैं ताके हिरदे आप ॥

अब वह जात (स्वरूप) मेरे हिरदे में रहता है। मान लो कोई बात मेरे मुंह से निकल गई और वह पूरी हो जाती है तो वह तो पूरी होने वाली होती है यह रहस्य है अलीगढ़ वालो जो मैं हीरे जवाहिरात भेंट कर रहा हूं। मगर क्या तुम लोग मेरी कदर करते हो तुम में शक्ति ही नहीं।

सांचे कोई न पतीजई झूठे जग पतियाय।
गली गली गोरस फिरे, मदिरा बैठ बिकाय॥
सांच कहूं तो मारही, यह तुर्कानी जोर।
बात कहूँ परलोक की, कर गह पकड़े चोर॥

उस समय मुसलमानों का राज्य था इसलिये स्पष्ट रूप में सच नहीं कहा गया। राधास्वामी दयाल ने भी प्रगट किया मगर तब मैं अंग्रेजों का राज्य था वह भारत में एकता होने नहीं देते थे। अब अपना राज्य है, वह तो सत है मैंने प्रगट किया इस समय भारत में एकता की आवश्यकता है। सतोमत की असली शिक्षा की आवश्यकता है ताकि भारत में एकता हो जाय इस स्पष्ट वर्णन से धार्मिक जाति वाले, चाहे वह हिन्दू हैं या मुसलमान ईसाई या सिक्ख आदि जो हैं अज्ञानी लोगों को लूटते हैं वह लूट तो बन्द होनी चाहिए। मेरा तो चल

चलाव का समय है मैं तो चला जाऊंगा आने वाले समय में समझ दार लोग मेरी बातों को अच्छी दृष्टि से देखेंगे जो मेरे विचारों से सहमत हैं वह मेरी इस सत्यता को प्रकाशित करने व फैलाने करने में मेरी सहायता करें क्या करोगे इस धन को लेजाकर जो तुम धोखे में रखते हैं उनके मठ और मन्दिरों मे रुपयों की बोरियाँ भरी जाती हैं सच्ची कहने वालों की बातें सुनने वाले कम हैं

अब चोरों के पकड़ने का समय आ गया है मुझसे सुना स्टेशन पर दाता दयाल (महर्षि शिव) ने कहा था मजहब (धर्म) मिल्लत (सम्प्रदाय) समाप्त हो जायेंगे अर्थात लोग इनको मानेंगे नही तुम शिक्षा में परिवर्तन कर जाना मैंने जो अनुभव किया वह सचाई के साथ कहा अपनी अपनी रिसर्च या अनुभव को कबीर साहिब स्वामी जी स्वामी दयानन्द आदि सब ने कहा तो मुझे भी अपना अनुभव कह जाने का हक है।

झूटे को झूठा मिले, अधिका बड़े सनेह।
झूटे को सांचा मिले, तब ही टूटे नेह

मैं सत्यप्रिय व्यक्ति हूँ मेरे साथ कौन प्रेम करता है दुनिया वाले स्वयं धोखे बाज है इनका प्रेम स्वाभिक ऐसे ही गुरुओं से हेरा-फेरी करने वाले है वह कहते हैं कि झूठा क्यों ? उनको दुनिया चाहिये हां मैं तुमको पुत्र देता हूँ मेरे प्रसाद से लड़का हो गया तो मैं कहता हूँ कि तेरे कर्म से हो गया वह मेरे जैसे से प्रेम नही करेगे उसको तो अपने विश्वास का फल मिल गया

कबीर लज्जा लोक की, बोले नाही सांच
जान बूझ कचंन तजे, क्यों तू पकड़े कांच

ग्रहस्थी लोक लजा पहिले से ही हैं महात्मा भी लोभ के कारण सच नही कहते यदि सच कहते हैं तो लोग आयेंगे नही वहाँ यह लोक लाज यहां यह लोक लाज

साधू ऐसा चाहिये सांची कहे बनाय
कै टूटे कै जुड़ रहे, बिन कहे भ्रमन जाय

मैं सचचा साधु हूँ सचची बात कहता हूँ यदि मैं प्रोपेगंडा करता कि देखो मैं कितना बड़ा हूं अमरीका में दर्शन देता हूं इस्तहान में बैठकर पर्चे हल करता हूं नदी में डूबने से बचाता हूं या ऐसी बातें सुनकर चुप रहता मैं सचचा नहीं हो सकता मगर नहीं मैं स्पष्ट कह देता हूं कि न मैं गया न मुझे पता

मैंने मानवता मन्दिर की नीव सत्यता के आधार पर रखी ताकि आने वाली दुनिया को सत्यम् विजयते का लोगों को ज्ञान हो मानव जाति का भला होता क्यों नहीं ग्रहस्थी तो अपनी राजनीति वाले अपनी कुर्सी की चिन्ता रहती है एक साधुओं का वर्ग था धर्म पर आधारित था मगर वह दोनो से गये बीते दुनिया में शान्ति कौन लाये मेरा अनभव कहता है कि असत्य का परिमाण देश की बर्बादी, अशान्ति, झगड़े जब लोग दुखी होगे तब असली सतमार्ग पर आयेंगे इसलिये मैं संसार को रास्ता बताये जाता हूँ

तेरा रूप हैं अद्भुत अचरज तेरी उत्तम देही
जग कल्याण जगत में आया, परम दयाल सनेही

हितैषी होकर जगत कल्याण को आया हूँ जिस समझ जिस तरीकों से जीव का कल्याण हो सकता है बताये जाता हूं मेरे जिम्मे गुरु ऋण था तूने काम दिया था मैं वह कर चला मैं दरियाम को नहीं देखता।

सांचे श्राप न लागई, सांचे काल न खाय
सांचे को सांचा मिले, सांचे नांहि समाय
सचाई पसंद को, आंच नहीं लागत
जाकी साची सूरत है ताका सांचा खेल
आठ पहर चौसठ घड़ी, साई सों है मेल

जिसकी सुरत में कपट नहीं उसका हर समय उससे मेल रहता है

सांच बिना सुमिरन नहीं, भय बिन भक्ति न होय
पारस में परदा रहे, कंचन केहि विधि होय

कबीर का कथन है कि जब तुम्हारे अन्दर सच्चाई नहीं तो जिस की याद करोगे वह सुमिरन नहीं है जब से मैं सांचा बना और यह समझा कि यह सब माया है तब जो जात का निजस्वरूप है उसके सुपुर्द करता रहता हूँ शरणागतम् मुंह से नाम जपू या न जपू पहिले बहुत नाम जपा तू अपार, अगाध, अनामी है परम तत्व है जगत प्रभू है अपने आपको उसके सुपुर्द करते रहना, यह इस समय का मेरा सुमिरन है

अब तो हम कंचन भये, तब हम होते कांच
सतगुरु की कृपा भई, मन में उपजा सांच

पहिले मैं भी कांच था जब से यह ज्ञान हुआ कि मैं किसी के अन्दर नहीं जाता मेरा मन ख्याल बदल गया सतगुरु की दया हुई वो कहते थे कि फकीर तुम में एक सचाई है यह एक सांच तुमको मंजिल पर ले जायगा जब से मुझे यह ज्ञान हो गया मैं कांच नहीं रहा

प्रेम प्रीति का चोलना पहिन कबीरा नाच
तन मन तापर वारि हों जो कोई बोले सांच

प्रेम प्रीति—किसी नाम को लेकर प्रीति करो ला लाइला इल्लाह कहलो या कबीर या नानक कहलो सर्वाधार प्रभु का क्या नाम सब नाम उसके हैं कहने को जो चाहो कहलो उसका कोई नाम नहीं वह तो प्रेम के वश हैं

जो तू सांचा बानिया सांची हाट लगाय
अन्दर झाड़ू देयकर कूड़ा दूर बहाय
मैं सचचा बानिया हूं सचचा सौदा बेचता हूं
मेरे अन्दर सांच जो बाहर कुछ जनवा
जानन हारा जानई अन्तर गत का भाव

यदि तेरे अन्दर सचाई है तो बाहर प्रगट करने की आवश्यकता नहीं। वह जानने वाला तेरे अन्दर के भाव को जानता है। इसलिये पहिले शुद्ध हृदय बनो अन्तर में सच्चा हो जायेगा। जो अन्तर में सच्चा होगा वह शरणागत होगा।

साईं आगे साच हो साईं साच सोहाय।
भावे लम्बे केसकर भावे घोट मुड़ाय॥

चाहे भंगुवे कपड़े पहिन लो चाहे सिर मुड़ालो इससे कुछ नहीं बनता है केवल अपने अन्तर में साचे बनो।
अब गृहस्थियों के लिये थे—

असली जीवन यस हैं कि मनुष्य दिल में समझले कि मैं ?....
सच के लिये अन्न वो एक पाव खाने को, कपड़ा तन ढकने को सब कपड़े नहीं पहनें तो संसार का व्यवहार को करते हुय जैसा समय आने जीवन को संतुलित करते हुये अपने आपको बे ताल्लुक रखता हुआ अपने कर्तव्य को पूरा करता रहे। बकील मुकदमा लेता है। झूठा मुकदमा कोई पाप नहीं मगर मन में यह विश्वास——के काम कुदरत करती रहती से। मेरे खाने की मरी लोग मदद करते हैं।

इसलिये राधास्वामी मत में पूर्ण गुरु की आवश्यकता है कि कितनी ही कठिनाई आती है। मुझ पर भी आई।

सत्संग मानव होता मन्दिर होशियार पुर २४-४-७१ यह सत्संग श्री मती कृष्णा बाई बम्बई वाली को कराया गया

मैं अपने आप से पूछता हूँ कि फकीर ! तुमने यह मकड़ी का जाला तन लिया। यह श्री मती कृष्णा बम्बई से सत्संग के लिये आई हैं। यह ६-७ वर्ष से मुझ से प्रेम भाव रखती है। लोग तुम्हारे पास आते हैं। क्या तुम किसी को कुछ दे सकते हो ?

मैं संसार में किसी खोज को निकला था। इन प्राणियों, धर्म और

पंथो ने मुझे दीवाना बना रक्खा था। मैंने जो कुछ समझा है वह कहना चाहता हूँ। मनुष्य का जीवन कुछ चाहता है। इसके अन्दर चाहना करने वाले मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार है। हमारी मनन शक्ति, चित्त शक्ति, बुद्धि शक्ति और अहंकार शक्ति यह कभी सांसारिक पदार्थ कभी धन मकान, कभी मान प्रतिष्ठा चाहती है यदि कुछ नहीं तो अपने शरीर को अवश्य स्थिर रखना चाहती है। क्या कोई संत महात्मा किसी को यह वस्तुयें दे सकता है। मैं तो यह समझता हूँ कि संत सांसारिक इच्छाओं को पूरा करने का ढंग या तरीका बतलाता है यह दो वस्तुयें मेरे पास हैं मुझे पता नहीं हैं।

जिस प्रकार के भाव और विचार तुम्हारे होंगे उसके अनुसार तुम्हारा जीवन बनेगा। इसका प्रमाण श्रीमती कृष्णा के पास होना चाहिये जब वह कहती हैं कि उसके पति पर कोई केस (मुकदमा) बन गया। इसने मेरे फोटो पर बल्ब लगाये हुये हैं। वह कहती हैं कि मैंने फोटो के सामने प्रार्थना की तो वहां से उत्तर मिला कि कुछ न होगा। तेरी सब चिन्ता दूर हो जायेगी और कुछ दिनों में ही वह चिन्ता दूर हो गई। कृष्णा ने और कई बातें बताईं जिनको यह चम त्कार समझती है, लेकिन कृष्णा को या दूसरे लोगों को यह निश्चय होना चाहिये कि मैं कहीं नहीं जाता और मुझे कुछ पता नहीं होता। वह जो कुछ किसी को मिलता है वह उसके अपने ही मन की सच्ची इच्छा का परिणाम होता है। तुम्हारा मन ओ३म के बिन्दु अर्थात दसवें द्वार से बना है। इसमें तुम जिस प्रकार के विचार भरोगे उसी प्रकार का तुम्हारा मानसिक जीवन बनता जायगा। अच्छे विचारों से अच्छा और बुरे विचारों से बुरा बनेगा और प्रेम से प्रेम का जीवन बनेगा। मु[illegible] देखो ! मैंने प्रेम का जीवन ग्रहण किया। दातादयाल (महर्षि शि[illegible] से मेरा प्रेम था। आरतिया करता तथा सेवा करता। जो कुछ [illegible] किया वह मुझे मिल रहा है। वह उसके अपने भाव व विचार का फल

इसलिये ऐ कृष्णा ! तुम बम्बई से सतसंग के लिये आई हो। मैं अपनी जुम्मेदारी अनुभव करता हूँ और सत्त वक्ता की हैसियत में ऋण से उत्तीर्ण होने के लिये सचाई वर्णन करता हूँ। ऐ इन्सान ! यदि मान आदर चाहते हो तो दूसरों का मान आदर करो। धन चाहते हो तो धन दो और प्रेम चाहते हो तो प्रेम दो। जो कुछ भी अपने सच्चे मन से कोई आदमी देता है वही वस्तु उसको मिलती है। यह इस संसार की दशा है। मैंने रास्ता बिलकुल सुगम कर दिया है। प्रेम करना घृणा द्वेश करना, भलाई बुराई करना या उपकार करना सब कुछ अपने हाथ में है। जैसे-जैसे विचार रक्खोगे वैसा-वैसा ही तुम्हारा जीवन बन जायगा। दातादयाल कहा करते थे कि जैसा ख्याल वैसा हाल, जैसी करनी वैसी भरनी, जैसी मति वैसी गति। इसलिये तुम जैसा बनना चाहते हो वैसा ही विचार अपने मन में रक्खो। कुछ करने के लिये मन सहारा चाहता है। यदि तुम अपना सम्मान चाहते चाहते हो तो दूसरों का सम्मान करो। यदि धनवान होना चाहते हो तो किसी को अपना इष्ट मानकर उसके द्वारा दूसरे आवश्यकता वालों को धन दोगे तो तुमको धन मिलेगा। इसलिये संतो के मार्ग में इष्ट बनाया जाता है और वह इष्ट गुरू का इष्ट है।

हमने दिया हुआ है इसलिये हमको मिलता है। हमने प्रेम किया हुआ है हमको प्रेम मिलता है और जहां घृणा की हुई है वहाँ से घृणा भी मिलती है। इससिये ऐ कृष्णा ! तुम अपने मन को जैसा चाहो बना सकती हो।

अब रहा इस मन से निकलने का सवाल, इससे वह निकल सकेगा जो और शब्द को अपना इष्ट रक्खेगा। सतपद और सतो की मैंने बड़ी महिमा सुनी। मेरी समझ मे क्या आया है ? सतपद और प्रकाश का मण्डल है। जब तक अभ्यास करते हुए मनुष्य मन को छोड़ कर दसवें द्वार से आगे नहीं जायगा वह शब्द और प्रकाश में नहीं जा

सकता है। यह है सतपद ताकि यदि वह वहां पहुंच जाय तो फिर वह वापिस इस दुनियां में न आये।

मगर यह जल्दी न होगा, जब तक पहिले तुम्हारा मन एक पोइन्ट पर इकट्ठा या एकाग्र न होगा और वहां ठहरेगा नहीं। इसके ठहरने के लिये पहले बाहर में मन से गुरु स्वरूप से प्रेम करना पड़ता है। फिर उस रूप से अपने अन्तर में प्रेम करना पड़ता है। इसलिये संतों ने गुरु स्वरूप के ध्यान को मुख्य लिखा है। यह प्रेम तब आयगा जब पहिले बाहर में प्रेम करने की आदत होगी। जो बाहर में किसी से प्रेम करके अपने मन को एकाग्र नहीं कर सकते वह अन्तर में भी अपने मन के साथ गुरु स्वरूप से प्रेम नही कर सकते। यह विशेष व्यक्ति होते हैं। जो ऐसा कर सकते हैं जैसे हुजूर दातादयाल (महर्षि शिव) थे। जिन्होंने लिखा है कि वह हुजूर महाराज (राय सालिगराम साहब) के दरबार में गये। वहां के नियम के अनुसार वह भी फूल, हार व वस्त्र आदि लेकर गये तो हुजूर महाराज ने देखा और कहा कि शिवव्रतलाज ! तुम्हारे लिये यह वस्तुयें लाना आवश्यक नही हैं। तुम केवल सत्संग में बैठो, मेरे सत्संग को सुनो और मेरी ओर देखते रहो।

हुजूर महाराज ने उनको ऐसा क्यों कहा ? क्योंकि उनके पिछले जन्म की कमाई की हुई थी इसलिये उनको इन वस्तुओं को लाने की आवश्यकता नहीं थी मगर जिनकी पिछले जन्मो की कमाई नहीं है उनके लिये यह फूल प्रसाद लाना और गुरु सेवा आवश्यक है। पहिले बाहर में प्रेम होता है फिर अन्तर में होता हैं।

ऐ कृष्णा ! तू मुझसे प्रेम करती है मैं चाहता हूँ कि तेरा बाहर मुखी प्रेम अन्तर मुखी हो जाय। जब तक तुम्हारा मन अपने अन्तर में उस रूप को बनाकर उसको अपने सामने खड़ा करके उसमें लय नहीं होगा तब तक दसवें द्वार तक पहुँचना कठिन है। अब जो इच्छा

हो यह करो। यह जीवों के अपने कर्म हैं। बेटी ! मेरी यह इच्छा है कि तुम्हारी कुल श्रेणियां जल्दी पूरी हो जांय। यदि मन अभी तक चंचल है, अन्तर मे गहरा ध्यान नहीं लगता है, चित्त वृति एकाग्र नहीं होती है तो इसके लिये बाहर मुखी प्रेम आवश्यक है। मैंने किया हुआ है इसलिये अनुभव के आधार पर कह रहा हूँ।

मैंने अपने कतव्य को पूरा कर दिया। मैंने जो यह मकड़ी का जाला तना है यह मेरे पिछले कर्म होंगे। मुझे तो कोई इच्छा नहीं है। मैं इस ओर खेचा जा रहा हूँ। तुम आ गई हो। इसलिये स्पष्ट कह जाना चाहता हूँ। पहले अपने अन्तर में गुरु मूर्ति का ध्यान करो। अपने अन्तर में उसको फूल चढ़ाओ, उसका कपड़े पहनाओ, उससे प्रेम करो। मगर क्या यह प्रेम करना किसी के वश में है ? यहां आकर मैं फेल हो गया। जिसके भाग्य में होता है वही यह करता है। कुदरत ने हमारे अन्दर आशायें भर दी हैं। यदि परमार्थ के लिये गुरु से प्रेम नहीं करते तो सांसारिक गरज के लिये ही मेरे फोटो के सामने खड़ो हो गई। यह भी न होने से कहीं अच्छा है।

काल रचा हम समझ बूझ के।
बिना काल नहिं होश जीव के॥

जब तक मनुष्य को सांसारिक कष्ट नहीं आते तब तक वह मन को एक ग्र करने की ओर ध्यान नहीं देता।

इसलिये बेटी ! अपने घट में प्रेम किया करो। प्रेम करने से तुमको दो लाभ होंगे। एक तो तेरे मन को आनन्द मिलेगा और दूसरे तेरे दुनियावी काम बनते रहेंगे। जो आदमी ध्यान करता है उसकी दुनियावी आवश्यकतायें पूरी होना अनिवार्य है। यह प्रकृति का नियम है यह मनोविज्ञान (Mental Sychology) है। इसलिये यदि परमार्थ के लिये ध्यान नहीं करते तो स्वार्थ के लिये ही ध्यान किया करो। जो स्वार्थ के लिये भी इस ओर आते हैं उनका परिणाम भी

अच्छा हो जाता है। दुनिया के काम भी बन जाते हैं और परमार्थ की राह पर भी आ जाते हैं।

मैं अपनी आत्मा से पूछता हूँ कि मैं संत हूं या नहीं। मैं अब संत नहीं रहा। सत पने का दर्जा मेरा अब समाप्त हो गया है। मैं प्रकाश से आगे चला गया हूँ। वह है अनामी धाम। वह है निज स्वरूप (जात) जहां निजस्वरूपना आ जाता है वहां न सतलोक है व अलखलोक है। जब तक है अगम देश रहता है। मेरी वर्तमान अवस्था अगम देश की है। अब मेरे पास सर्व साधारण लाभ नहीं उठा सकते. मेरा चित्त नहीं चाहता कि मैं नीचे आकर दूसरों के साथ खेल करूँ। यात्री को वह लेजा सकता है जो यात्रा में हो। जिसकी यात्रा पूरी हो गई है वह दूसरों को अपने साथ नहीं लेजा सकता। मेरी यात्रा समाप्त हो गई है। मेरे पास तो तुम अब अपने विश्वास से जो इच्छा हो ले सकते हो और सच्चा मार्ग ले सकते हो। जब मेरी नीचे की अवस्था थी तो मैं तुम लोगों के साथ खेलता था। जैसा कोई आया वैसा खेल खिलाया और उसको उत्साहित किया। यह काम मैंने कृष्ण जी को दे दिया है।

इसलिये बेटी! तू आई है, मैंने अपनी पोजीशन स्पष्ट कर दी। तुम लोग साधु गुरुओं, महात्माओं और प्रेमी जनों का संग करो। यदि उनका संग नहीं मिलता तो दुखियों की सहायता किया करो। भलाई और परोपकार काकाम किया करो। इससे तुम्हारा मन एकाग्र होना शुरू हो जायगा। जब महासुन्न की अवस्था आजाय तब फिर शब्द और प्रशाद की बारी आयेगी। जिनका मन दसवें द्वार में एकाग्र नहीं होता वह बाहर की भक्ति करने और बाहर में प्रेम करने के लिये विवश हैं। उनके वश की बात नहीं हैं क्योंकि मन का काम ही खेलना हैं।

आज शब्द निकला था कि सत्संग किसको कहते हैं। सत्संग वह है जब सत का कीर्तन होता है। साधारण लोग गाने बजाने को कीर्तन

कहते हैं। यह भी एक प्रकार का कीर्तन ही है लेकिन सत का असली कीर्तन है अपने अन्तर में प्रकाश को देखना और शब्द का सुनना।

सतसंग किसको कहत है सो भी तुम सुन लो।
सत्त नाम सतपुरुष का, जहा कीर्तन हो॥

जहां सतनाम और सतपुरुष का कीर्तन हो वह सतसंग है। पुरुष किसको कहते हैं? उसे जिसमें पुरुषार्थ हो। इस संसार में सबसे अधिक पुरुषार्थी कौन है? प्रकाश अथवा पारब्रह्म क्योंकि वह रचना करने वाला है। प्रकाश सत्पुरुष है और शब्द सतनाम है। बाहर के गुरु की यह ड्यूटी है कि वह जीवों को सत्पुरुष और सतनाम की ओर उनके अन्तर में लगावे मगर जब तक किसी का मन एकाग्र नहीं होता तब तक कोई जीव वहां जा नहीं सकता है। कहने को कोई जो चाहे कहले यह सब ख्याली पुलाव है। जिसमें बाहरी प्रेम (इश्क मजाजी) नहीं किया वह इश्क हकीकी (सच्चा प्रेम) नहीं कर सकता। हिंसा और हविस करने वाले की बात छोड़ो। यह क्रियात्मक (प्रैक्टीकल) जीवन का पाठ है। वह असली कीर्तन। नानक साहब ने सर्व साधारण जीवों के लिये बाहर का कीर्तन नियत किया और यह मुबारिक है मगर हम लोग जीवन भर बाहर के कीर्तन में ही लगे रहते हैं।

राधास्वामी मत में हुजूर महाराज ने बाजे की पृथा नहीं रक्खी। केवल शब्दों की लय थी ताकि इस लय के साथ मनुष्य की सुरत एकाग्र हो जाय। बाजे से बहिरमुख ही एकाग्र हो सकती है मैं बहुत चंचल वृत्त का आदमी था। आप मुझ से अच्छे रहे। चूंकि मुझ में प्रेम का भाव था इसलिये दादूदयाल ने मुझे चार तारों वाला तम्बूरा लेकर दिया था। मैं उसको अपने कान से लगाकर बजाया करता था। और अपने अन्तर के सब शब्द तम्बूरे सुना करता था। इस साधन से मैं अन्तर मुखी हो गया। इसलिये मैं कीर्तन भजन का खंडन नहीं करता। अपनी-अपनी जगह पर हर एक वस्तु की आवश्यकता है।

ऐ कृष्णा ! तू सत्संग में आई है। तू ऐसे साधन किया कर ताकि तुझ को स्वार्थ और परमार्थ दोनों ही मिलते रहे। रह गया मैं, मैं एक सचाई प्रिय होने के नाते अपनी पोजीशन साफ कर देना चाहता हूं जो कुछ भी किसी को मिलता है। वह श्रद्धा और अपने विश्वास का खेल है। जब तू मेरे फोटो के सामने खड़ी हुई थी तो मैं वहां गया नहीं था। वह तेरे अपने ही मनका खेल था। आज दिन तक ऐसी बात कहने का दस्तूर या रिवाज नहीं रहा क्योंकि इससे जीव को जो आनन्द अज्ञान से मिलता है, मगर मैं अपनी जान बचाने के लिये स्पष्टता से काम लेता हूं क्योंकि मैं स्पष्ट नहीं कहता तो, तुम लोग जो मेरे रूप से अपने विश्वास से काम लेते हो, सवाल करके जबाब लेते हो मुझ पर ४२० होने का जुर्म सिद्ध होता है इससे मेरी आत्मा शान्ति प्राप्त नहीं कर सकती। यह एक नई बात हैं जो मैंने पैदा की है।

इस रहस्य को सबने पर्दे या गुप्त रक्खा है या तो जीवों के कल्याण के लिये अपने मान प्रतिष्ठा और धनधाम के लिये। इसका निर्णय उन महात्माओं की आत्मायें करेंगी जिन्होंने यह गुप्त रक्खा है। उससे लाभ यह हुआ कि जीव उत्साहित होकर आनन्द लेता है। चूंकि इन गुरुओं के अन्तिम जीवन कष्ट पूर्ण रहे इसलिये मैं डर गया अन्यथा आप जैसे अमीरों से यदि मैं स्पष्ट वर्णन न करता तो जितना चाहे रुपया ले लेता। और तुम लोग अज्ञान से मेरी पूजा करते मगर मैं इसके विरुद्ध हूं। जिसकी जी चाहे 'मानवता मन्दिर' को कुछ दे चाहे न दे।

तो यह मार्ग है। यह एक दिन का काम नहीं है।

सहज पके सो मीठ होय।

मगर कुछ प्रारब्ध कर्मों का फल भी होता है।

चौथा पद मन खंड कहावे।
महासुन्न के पार रहावे॥

धन्यवाद

श्री सेठ बद्री प्रसाद जी मैसूर ने ५० रु० व सेठ गंगाधर जी बंगलौर ने २५ रु० 'मनुष्य बनो' के प्रकाशक को सहायतार्थ दिये हैं। इसके लिये हम आभारी है और मालिक से प्रार्थना है कि उनका कल्याण करे।

— :o:—

भीम प्रिंटिंग वर्क्स, निधीश निकेतन, मदार गेट,अलीगढ

१—शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिकता के नियमों का वास्तविक दृष्टि कोण से प्रचार करना और प्रेम, सभ्यता, आदर, शिष्टाचार, सदाचार, सहनशीलता और सयम की शिक्षा देना इसका मुख्य उद्देश्य है। मनुष्य बनना और बनाना।

२—सन्त महात्माओं और ऋषियों की वाणी सरल, सुबोध और

शोक समाचार

अफसोस है कि श्री मुन्शी लाल विश्व प्रेमी परलोक सिधार गये हैं। विशेष विवरण अगली बार दिया जायगा। 'मनुष्य बनो' शीघ्र ही चालू किया जा रहा है।

फकीर

आगे के लिये 'मनुष्य बनो' के सम्बन्ध में श्री देवी चरन मीतल, लेखराज नगर अलीगढ़ से पत्र व्यवहार करें।

एडीटर-मैनेजर--मुन्शीलाल गोविल (विश्व प्रेमी)

हमारे यहां की पुस्तकें —:

		रु० पैसे
१—	मनुष्य बनो हिन्दी	६२
२—	जागृत जीवन	७५
३—	मानव धर्म प्रकाश उर्दू	१—५०
४—	सन्त मत सार हिन्दी	१—००
५—	फकीर शब्दावली ,,	७५
६—	आत्मिक आदर्श ,,	७५
७—	सार भेद सचाई ,,	३६
८—	आकाशी रचना उर्दू	६०
९—	सांई की मौज	६०
१०—	शब्द सार हिन्दी	७५
११—	अनहद टंकार-झंकार	५०
१२—	जीवनी दातादयालजी उर्दू	५) ६)
१३—	मनोनियम हिन्दी	१—००
१४—	सांई की सदा हिन्दी	५०
१५—	सांई के सौ ख्याल	५०
१६—	सतगुरु-सन्देश	७५
१७—	विष्णु संहिता हिन्दी	१—५०
१८—	शिव संहिता ,,	१—५०
१९—	दयाल संहिता उर्दू	७५
२०—	सुमेरु पर्वत	१—५०
२१—	दाता दयाल शब्द संग्रह	६२
२२—	योगी हिन्दी	७५
२३—	शकुन विद्या हिन्दी	२५
२४—	दस अवतार तिरंगा	२५
२५—	परमार्थ सुधार हिन्दी	७५
२६—	भाग्य को बढ़ाओ हिन्दी	२५
२७—	निष्कलंक अवतार हिन्दी-उर्दू	५०
२८—	विश्व हितैषी उर्दू	१—५०
२९—	विश्वप्रेमी ,,	५०
३०—	Key to Freedom Eng	१)
३१—	जगत कल्याण, जगत निस्तार	
३२—	जगत उद्धार हि. उर्दू	२) १॥) १।)
३३—	यथार्थ शान्ति सन्देश उर्दू	५०
३४—	कानूने मसावात हिन्दी	१—००
35—	Message of Peace & Prosperity	15
36—	Truth & Reality	,, 37
37—	Independence Day Messages	,, 75
38—	Real Independence	,, 31
39—	Letters of Data Dayal	,, 75
	Light on Anandyog	Rs 3-00

प्रकाशक व ऐडीटर
मुन्नीलाल गोविल (विश्वप्रेमी)
'मनुष्य बनो' कार्यालय
परम दयाल कम्पाउन्ड, पेन्ची जामाजी,
यू० ऐम० जैन रोड, अलीगढ़ यू० पी०

Regd. No. A—808

कृपया न मिलने पर निम्न पते पर लौटा दें।
प्रा० नं० 20 "मनुष्य बनो कार्यालय" RS
परम दयाल कम्पाउन्ड, पेन्ची जामाजी, अलीगढ़ उ० प्र०

श्रीमान् C—Gajraj Myaker
Hindi Pandit
Rathore Building
Kuchamma Gali
Jume-Raat Bazar
NIZAMABAD (A.P.)